श्री धनावंशी हित

धनावंशी चेतना की मासिक पत्रिका

वर्ष : 1 | अंक : 11 | नवम्बर 2020 | मूल्य : 20 रु.

धनावंश आध्यात्मिक विचार और जीवनशैली

धनावंशियों की जिज्ञासा कैसे जागृत हो?

धनावंश के बारे में विभिन्न मुद्दे

मेरा धनावंश मेरा सौभाग्य

।। जय श्री कृष्णा ।।

।। श्री धनाजी महाराज की जय ।।

।।श्री धनावंशी स्वामी समाज के प्रति हार्दिक शुभकामनाएं।।

* शुभेच्छु *

हीरालाल साध

जोधपुर

हाल निवास- अबुधाबी (UAE)

पावन सन्निधि
श्री ठाकुरजी महाराज
भक्त शिरोमणि श्री धनाजी

मानद परामर्श
परिव्राजक श्रीसीतारामदास स्वामी

सम्पादक एवं प्रकाशक
चेतन स्वामी

सहायक सम्पादक
प्रशांत कुमार स्वामी, फतेहपुर
श्रीधर स्वामी, सुजानगढ़
(अवैतनिक)

अकाउंट विवरण
Dhanavanshi Prakashan
A/c No. - 38917623537
Bank - State Bank of India
Branch - Sridungargarh
IFSC code - SBIN0031141

सम्पादकीय कार्यालय
श्री धनावंशी हित
धनावंशी प्रकाशन, कालूबास,
श्रीडूंगरगढ़-331803
(बीकानेर) राज.
M.: 9461037562
email:chetanswami57@gmail.com

सम्पादक प्रकाशक
चेतन स्वामी द्वारा प्रकाशित
तथा महर्षि प्रिण्टर्स, श्रीडूंगरगढ़
से मुद्रित।

पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के हैं। उनसे सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। रचना की मौलिकता व वैधता का दायित्व स्वयं लेखक का है, विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र श्रीडूंगरगढ़ रहेगा।

मूल्य : एक प्रति 20/- रु.
वार्षिक 200/- रु.

श्री धनावंशी हित

धनावंशी चेतना की मासिक पत्रिका

वर्ष : 1 अंक : 11 नवम्बर 2020 मूल्य : 20/- रुपये

गुरुभगति पद

म्हानै दीन्हो भगती रो दुर्लभ ज्ञान बलिहारी मेरे सदगुरू की।
म्हानै गुरुवर मिलिया महान, बलिहारी म्हारै सदगुरू की ।
अन्तरा
धरम, अर्थ और काम जगत में मुक्ति जग से आन।
इण मुक्ति री जुगत बतावै, सोई सतगुरु पहचान।।
जगत रूप ईश्वर की सेवा, जाणो आप समान।
सगुण निगुण का भेद बताया, ब्रहम सकल भगवान।।
सतसंगत और ठाकुर सेवा, निश दिन हरि गुणगान।
पर धन- पर दारा नहीं ध्यावे, सोई वैरागी जान।।
मोह माया का बंधन टूटया, तन को हट्यो गुमान।
मन की दुविधा दूर हटावे, तब लग आतम ध्यान।।
गरीब दास गुरु किरपा पाई, धना वंश धनवान।
चेतन जोति निहारी घट घट, निश्चय भयो कल्यान।।

अनुक्रमणिका

* सम्पादकीय-
  धनाजी को न माननेवाला कैसा धनावंशी?/04
* धनावंशी वैष्णवों के लिए तुलसी-/05
* आलेख-
  धनावंश आध्यात्मिक विचार और जीवनशैली/07
  समाज की पहचान कायम हो/09
  मेरा धनावंश धनाजी के मंदिरों की स्थापना को प्राथमिकता दे/10
  धनावंशियों की जिज्ञासा कैसे जागृत हो/12
  धनावंश के बारे में विभिन्न मुद्दे/13
  मेरा धनावंश मेरा सौभाग्य/15
  वैष्णवता का स्वरूप/17
  धनावंश के संकल्प/24
  गारबदेसर बैराग मण्डल/27
  धनावंश के कुछ कार्य प्राथमिकता से हो/29

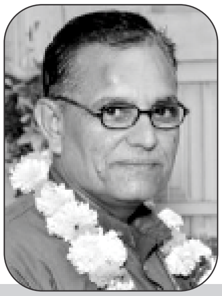

सम्पादकीय

धनाजी को न माननेवाला कैसा धनावंशी ?

धनावंशी भाई वर्षों से अलग थलग से रहे हैं। संस्थाओं के नाम पर केवल दो तीन छात्रावास ही हैं। उनमें भी ज्यादा मिलने--जुलने की गुंजाइश नहीं। एक दूसरे से कटे- कटे रहनेवाले धनावंशी को नए परिप्रेक्ष्य की बातें सुहा नहीं रही हैं। इतने वर्षों से अलग-अलग धारणाओं में जीनेवाले धनावंशी को लगता रहा है कि वह एक स्वयंभू जाति है, जिसका ताल्लुक किसी धनेष्ठा नाम के ऋषि से है, और वह सृष्टि रची तब से है। उसने सोच रखा था, कि वह श्रेष्ठ ब्राह्मण है। जब इस पंथ की वास्तविकता बताई तो स्वमेव धारणा बनानेवाले भाइयों को बड़ा धक्का लगा। मजे की बात है कि हर धनावंशी धनाजी के बारे में यह तो जानता है कि वे महान प्रभु भक्त थे, पर उन्हीं धनाजी ने कृपा कर हमें जाट से धनावंशी वैरागी बनाया, इस बात को न तो जानते हैं और न ही मानते हैं।

असल मे सच को जानने और मानने का कभी प्रयास ही नहीं किया गया। धनाजी के साथ अजीब बात यह हुई कि धनावंश की स्थापना करने के कारण वे जाट समाज से भी कट गए। उन्हें जाट समाज में उतनी प्रसिद्धी नहीं मिली। क्योंकि, जाटों का कहना रहा कि वे तो स्वामी बन गए। अब धनावंशी दे उनको प्रतिष्ठा। अपढ किस्म के धनावंशी धनाजी से इसलिए दूर रहे--क्योंकि जाट धनाजी को वे क्यों पूजे-वे तो श्रेष्ठ बैरागी हैं। अनेक भ्रमों में उलझे धनावंशी के संशय को कोई दूसरा नहीं निकाल सकता है-उसे स्वयं ही प्रयास करना पड़ेगा।

किसी भी धार्मिक पंथ का सिद्धांत है कि जो अपने पंथ प्रवर्तक गुरु को नहीं मानता,वह प्रकारांतर में उस पंथ को ही नहीं स्वीकार कर रहा है। जांभोजी को न माननेवाला विश्नोई कैसे हो सकता है? रामानंदजी को न माननेवाला रामावत कैसे हो सकता है? इसी तरह से धनाजी को न माननेवाला कैसा धनावंशी ?

कृपाकांक्षी
चेतन स्वामी

अनुरोध

महंत व्यवस्था पर पुनः पुनः विचार करने की आवश्यकता है।

कुछ धनावंशी बंधु इस आधुनिक युग में महंत व्यवस्था को अनौचित्यपूर्ण मानते हैं। वे सोचते हैं, यह व्यवस्था समाप्त हो जाए तो भी समाज का कुछ अनर्थ नहीं होनेवाला। धनावंश की महंत परम्परा के समाप्त होने के लिए तो हमें कोई प्रयास ही कहां करना पड़ रहा है। एक- एक महंत द्वारे बंद होते जा रहे हैं। अब बचा ही क्या है? पर ऐसा होना घातक है। जब धनावंश-एक सम्प्रदाय बना तो-महंत द्वारे किसी मजाक के तहत कायम नहीं किए गए। रामानंदीय रामावत सम्प्रदाय के 36 द्वारे हम से पहले बने और यह परम्परा खूब पल्लवित हुई। हमारे अनेक धनावंशी जब अपने कार्यक्रमों में किसी दूसरे पंथ के महंत को बुलाते हैं, तो बहुत बुरा लगता है, और अपने पंथ की धार्मिक दुर्दशा का प्रदर्शन होता है। उन महंतों के मन में क्या यह प्रश्न उपस्थित नहीं होता है कि इनके समाज में कोई एक प्रबुद्ध आचार्य या महंत नहीं है जो समाज को समय-समय पर संबोधित कर सके। महंत-मंदिर और दूसरी साम्प्रदायिक परम्पराएं ही नहीं रहेंगी तो कहां से वैरागी रह जाओगे? जरा गहराई से सोचो भाई लोगो। सिस्टम बीमार है तो सही करो। हमारे बहुत से धनावंशी मित्र, महंत का नाम आते ही नाक सिकोड़ने लगते हैं। जबकि रोग जिस अंग मे हुआ है, दवा भी उसी अंग की करनी पड़ेगी। सम्प्रदाय है तो महंत उसकी अनिवार्य कड़ी है। इसलिए महंत को दरकिनार कर सम्प्रदाय नहीं रखा जा सकता। साधुओं में कोई गरिमा गंवा दे,तो साधु संज्ञा की गरिमा थोड़े ही जाती रहती है? साधुत्व के मूल्य तो सदैव ही उच्च रहेंगे। अगर महंतीय व्यवस्था, पंथ की गरिमा के अनुकूल नहीं है तो समाज को सबसे पहले अविलंब सभी महंतों की एक सभा बुलानी चाहिए और उन्हें उनका दायित्व बताना चाहिए। काम तो सभी एक एक कर करने होंगे । यह ठीक वैसे ही है जैसे कोई कहे--मंदिर तो रहे;पर पुजारी नहीं रहने चाहिए। पुजारी खराब हो गया है, पथ चूक गया है तो उसे बदलो। महंत ही सम्प्रदाय के आधार होते हैं। पढे लिखे, विद्वान, समझदार महंत नहीं है तो महंत की नियुक्ति राजस्थान सरकार थोड़े ही करती है? आप ही तो चुनते रहे हैं महंत। व्यवस्था खराब है-मार्ग थोड़े ही खराब था?

अंहकार की लड़ाई में हमेशा हारने वाला ही जीतता हैं।

धनावंशीय वैष्णवों के लिए तुलसी-वृक्ष की अनिवार्यता

शिवजी बोले–नारद! सुनो; अब मैं तुलसी का माहात्म्य बताता हूँ, जिसे सुनकर मनुष्य जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत किए हुए पापा से छुटकारा पा जाता है। तुलसी का पत्ता, फूल, फल, मूल, शाखा, छाल, तना और मिट्टी आदि सभी पावन हैं। जिनका मृत शरीर तुलसी–काष्ठ की आग से जलाया जाता है, वे विष्णुलोक में जाते हैं। मृत पुरुष यदि अगम्यागमन आदि महान पापों से ग्रस्त हो, तो भी तुलसी–काष्ठ की अग्नि से देह का दाह–संस्कार होने पर वह शुद्ध हो जाता है। जो मृत पुरुष के सम्पूर्ण अंगों में तुलसी का काष्ठ देकर पश्चात् उसका दाह–संस्कार करता है, वह भी पाप से मुक्त हो जाता है। जिसकी मृत्यु के समय श्री हरि का कीर्तन और स्मरण हो तथा तुलसी की लकड़ी से शरीर का दाह किया जाए, उसका पुनर्जन्म नहीं होता। यदि दाह–संस्कार के समय अन्य लकड़ियों के भीतर एक भी तुलसी का काष्ठ हो तो करोड़ों पापों से युक्त होने पर भी मनुष्य की मुक्ति हो जाती है। तुलसी की लकड़ी से मिश्रित होने पर सभी काष्ठ पवित्र हो जाते हैं। तुलसी–काष्ठ की अग्नि से मृत मनुष्य का दाह होता देख विष्णुदूत ही आकर उस वैकुंठ में ले जाते हैं; यमराज के दूत उसे नहीं ले जा सकते। वह करोड़ों जन्मों के पाप से मुक्त हो भगवान् विष्णु को प्राप्त होता है। जो मनुष्य तुलसी–काष्ठ की अग्नि में जलाए जाते हैं, उन्हें विमान पर बैठककर वैकुंठ में जाते देख देवता उनके ऊपर पुष्पांजलि चढ़ाते हैं। ऐसे पुरुष को देखकर भगवान् विष्णु और शिव संतुष्ट होते हैं तथा श्री जनार्दन उसके सामने जो हाथ पकड़कर उसे अपने

धाम में ले जाते हैं। जिस अग्निशाला अथवा श्मसान भूमि में घी के साथ तुलसी–काष्ठ की अग्नि प्रज्वलित होती है, वहाँ जाने से मनुष्यों का पातक भस्म हो जाता है।

जो ब्राह्मण तुलसी–काष्ठ की अग्नि में हवन करते हैं, उन्हें एक–एक सिंथ (भात के दाने) अथवा एक–एक तिल में अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है।। जो भगवान को तुलसी–काष्ठ का धूप देता है, वह

समय जब निर्णय करता है,तब गवाहों की जरूरत नहीं होती हैं।

उसके फलस्वरूप सौ यज्ञानुष्ठान तथा सौ गोदान का पुण्य प्राप्त करता है। जो तुलसी की लकड़ी की आँच से भगवान् का नैवेद्य तैयार करता है, उसका वह अन्न यदि थोड़ा–सा भी भगवान् केशव को अर्पण किया जाए तो वह मेरु के समान अन्नदान का फल देने वाला होता है। तुलसी–काष्ठ की आग से भगवान् के दीपक जलाता है, उसे दस करोड़ दीप–दान का पुण्य प्राप्त होता है। इस लोक में पृथ्वी पर उसके समान वैष्णव दूसरा कोई नहीं दिखाई देता। जो भगवान् श्रीकृष्ण को तुलसी–काष्ठ का चंदन अर्पण करता है तथा उनके श्रीविग्रह में उस चंदन को भक्तिपूर्वक लगाता है वह सदा श्री हरि के समीप रमण करता है। जो मनुष्य अपने अंग में तुलसी की कीचड़ लगाकर श्री विष्णु का पूजन करता है, उसे एक ही दिन में सौ दिनों के पूजन का पुण्य मिल जाता है। जो पितरों के पिंड में तुलसी–दल मिलाकर दान करता है, उसे एक ही दिन में सौ दिनों के पूजन का पुण्य मिल जाता है। जो पितरों के पिंड में तुलसी–दल मिलाकर दान करता है, उसके दिए हुए एक दिन के पिंड से पितरों को सौ वर्षों तक तृप्ति बनी रहती है। तुलसी की जड़ की मिट्टी के द्वारा विशेष रूप से स्नान करना चाहिए। इससे जब तक वह मिट्टी शरीर में लगी रहती है, तब तक स्नान करने वाले पुरुष तो तीर्थ–स्नान का फल मिलता है। जो तुलसी की नई मंजरी से भगवान् की पूजा करता है, उसे नाना प्रकार के पुष्पों द्वारा किए हुए पूजन का फल प्राप्त होता है। जब तक सूर्य और चंद्रमा है, तब तक वह उसका पुण्य भोगता है। जिस घर में तुलसी–वृक्ष का बगीचा है, उसके दर्शन और स्पर्श से भी ब्रह्महत्या आदि सारे पाप नष्ट हो जाते हैं।

जिस–जिस घर, गाँव अथवा वन में तुलसी का वृक्ष हो, वहाँ–वहाँ जगदीश्वर श्री विष्णु प्रसन्नचित्त होकर निवास करते हैं। उस घर में दरिद्रता नहीं रहती और बंधुओं से वियोग नहीं होता। जहाँ तुलसी विराजमान होती है, वहाँ दुःख, भय और रोग नहीं ठहरते। यों तो तुलसी सर्वत्र ही पवित्र होती है, किंतु पुण्यक्षेत्र में वे अधिक पावन मानी गई हैं। भगवान् के समीप पृथ्वी तल पर तुलसी को लगाने से सदा विष्णुपद (वैकुण्ठ–धाम) की प्राप्ति होती है। तुलसी द्वारा भक्तिपूर्वक पूजित होने पर शांतिकारक भगवान् श्री हरि भयंकर उत्पातों, रोगों तथा अनेक दुर्निमित्तों का भी नाश कर डालते हैं। जहाँ तुलसी की सुगंध लेकर हवा चलती है, वहाँ की दसों दिशाएं और चारों प्रकार के जीव पवित्र हो जाते हैं। मुनिश्रेष्ठ! जिस गृह में तुलसी के मूल की मिट्टी मौजूद है, वहाँ सम्पूर्ण देवता तथा कल्याणमय भगवान् श्री हरि सर्वदा स्थित रहते हैं। ब्रह्मन! तुलसी–वन की छाया जहाँ–जहाँ जाती हो, वहाँ–वहाँ पितरों की तृप्ति के लिए तर्पण करना चाहिए।

नारद! जहाँ तुलसी का समुदाय पड़ा हो, वहाँ किया हुआ पिंडदान आदि पितरों के लिए अक्षय होता है। तुलसी की जड़ में ब्रह्मा, मध्य भाग में भगवान् तथा मंजरी में श्री रूद्रदेव का निवास है; इसी से वह पावन मानी गई है।

विशेषत: शिव–मंदिर में यदि तुलसी का वृक्ष लगाया जाए तो उससे जितने बीज तैयार होते हैं, उतने ही युगों तक मनुष्य स्वर्गलोक में निवास करता है। जो पार्वण श्राद्ध के अवसर पर, श्रवण मास में तथा संक्रान्ति के दिन तुलसी का पौधा लगाता है, उसके लि, वह अत्यंत पुण्यदायिनी होती है। जो प्रतिदिन तुलसी–दल से भगवान् की पूजा करता है, वह यदि दरिद्रह है तो धनवान् हो जाता है। तुलसी की मूर्ति सम्पूर्ण सिद्धियां प्रदान करने वाली होती है; वह श्रीकृष्ण की कीर्ति प्रदान करती है।

स्वयं का शिक्षक बनकर स्वयं को शिक्षा देना ही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है।

आलेख

धनावंश आध्यात्मिक विचार और जीवन शैली

बंदउं गुरू पद पदुम परागा
सुरूचि सुबास सरस अनुरागा !
अमिय मूरिमय चूरन चारू
समन सकल भव रूज परिवारू!!

मैं उन गुरु महाराज के चरण कमल की वंदना करता हूं,जो कृपा के समुद्र और नर रूप में श्रीहरि ही हैं! और जिनके वचन महा मोह रूपी घने अंधकार को नाश करने के लिए सूर्य किरणों के समूह हैं।

धनावंश एक परम भागवत भक्त गुरुदेव धनाजी द्वारा प्रेरित समाज है। ऐसा समाज- जिसको प्राचीन समय मे और वर्तमान समय में भी बहुत आदर और सम्मान के साथ देखा जाता है। इसे दूसरे समुदायों ने एक विशिष्टता का स्थान दिया है। इसका मूल कारण धनावंश में अध्यात्म, भगवत प्रेम और भगवान के प्रति समर्पण रहा और इस आदर और सम्मान को प्राप्त करवाने में गुरुदेव श्रीधनाजी महाराज का आशीर्वाद रहा है।

• **घनश्याम दास स्वामी**

संवत 1532 में जब धनाजी ने धनावंश की स्थापना की तो उन्होंने मूल मंत्र के रूप में नाम संकीर्तन और परोपकार ये दो विधियां हम धनावंशियों को सौंपी और हमारे पूर्वजों ने इन दोनों निधियों को संभाल कर इन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी हम तक पहुंचाया। अब हमारा दायित्व यह बनता है कि हम भी धनावंश की आने वाली पीढ़ियों को हमारा स्वर्णिम इतिहास ईश्वर आराधना एवं परोपकार की भावना उपहार स्वरूप भेंट देकर स्वयं पर उपकार करें!

धनावंश वैष्णव संप्रदाय रूपी वृक्ष की एक सघन शाखा है और विशुद्ध रूप से वैष्णव होने के कारण इस समाज के सामने अध्यात्म की बात करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। फिर भी वर्तमान समय में समाज में कुछ भ्रांतियां, कुछ अलगाव, कुछ फैशन और व्यसन अहंकार जैसी कई विकृतियां आ गई हैं। इस सम्बन्ध में मेरा मत यह है-- एक तो समाज को अपने इतिहास के बारे में पूर्ण जानकारी ना होना, दूसरा समय से आगे निकल जाने की मनुष्य की महत्वकांक्षा। इसके अतिरिक्त अर्थ को कुछ ज्यादा महत्व देना। धन के पीछे भागना। उसके लिए अपने नैतिक मूल्यों का भी यदि पतन हो तो भी उसे स्वीकार कर लेना- विकृतियां आने का मूल कारण है।

परंतु जिस तरह मृत्यु शाश्वत सत्य है, उसी तरह यह बात भी सत्य है कि धन कोई अपने साथ नहीं ले जा पाता है।
यदि साथ चलने वाली कोई चीज है,तो वह आपका पुरुषार्थ ही है। आपके स्वभाव के गुण और प्रभु का नाम

समस्याओं पर बहस करने के बजाय, समाधान करने पर जोर दिया जाये।

है। उसी के आधार पर आपको दुनिया अच्छा या बुरा कहती है। इन विकृतियों को मिटाने के लिए सबसे आवश्यक वस्तु यदि कोई है तो वह अध्यात्म- सत्संग और भगवान का नाम है।

बिनु सतसंग न हरि कथा
तेहि बिनु मोह न भाग !
मोह गए बिनु राम पद
होइ न दृढ अनुराग!!

सत्संग के बिना हरि की कथा सुनने को नहीं मिलती, उसके बिना मोह नहीं भागता और मोह के गए बिना श्री रामचंद्रजी के चरणों में अटल प्रेम नहीं होता। इसलिए प्रत्येक धनावंशी को अपने जीवन में अध्यात्म और सत्संग को विशेष महत्व देना चाहिए। क्योंकि वैष्णव वही है, जो नाम संकीर्तन में मदमस्त और अपने आराध्य के प्रति समर्पित गुरु भक्त और परोपकार करने वाला हो।

सत्संग का सार नाम संकीर्तन है। इसलिए समस्त धनावंशी भ्राता यह नियम बनावें कि सुबह और सायंकाल कम से कम एक घंटे का समय अपने इष्ट के लिए जरूर समर्पित करें। और सुबह ब्रह्म मुहूर्त में उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर भगवान की पूजा में सम्मिलित हो। भगवान का नाम स्मरण करे। उसके बाद ही दैनिक कार्य करे। जिन बंधुओं को सायंकाल के समय भी यदि अवसर प्राप्त हो तो भगवान की पूजा में सम्मिलित होकर नाम संकीर्तन कर उसके बाद ही भोजन आदि क्रिया करे। भोजन करने से पहले भोजन को भगवान को अर्पित करके भगवान का प्रसाद समझकर ग्रहण करे। अपने बालकों को अपने गुरु और आराध्य के विषय में संपूर्ण जानकारी देने का प्रयत्न करे। और उन्हें मंदिर अपने साथ लेकर जाएं, भगवान की पूजा में उनको सम्मिलित करे।

और उनको परोपकारी, निष्ठावान और भगवत भक्त बनाने का अपना उत्तरदायित्व निभाने का हर संभव प्रयत्न करें। क्योंकि दूसरे समाज जो हमें अति विशिष्ट स्थान देते हैं, उसके पीछे यही आध्यात्मिक कारण है। जो हमें अन्य समाजों से अलग पंक्ति में खड़ा करता है।

अपने बालकों की वेशभूषा का विशेष ध्यान रखें। प्राचीन समय में पोशाक देखकर लोग यह अंदाजा लगा देते थे कि यह व्यक्ति इस जाति या संप्रदाय का है। विशेष कर बच्चियों पर ध्यान दें। उन्हें गृह कार्य में दक्ष, शिक्षित और अध्यात्म चिंतन से ओतप्रोत रखने वाले संस्कार प्रदान करें। क्योंकि कन्याएं वंशबेल होती है और प्रकृति का नियम है जैसी बेल होगी उसका फल वैसा ही होगा।

वेशभूषा यदि आधुनिक समय में अलग करना संभव नहीं समझते तो आप कम से कम धनावंशी बालकों के गले में कंठी, सिर पर चोटी और माथे पर तिलक जो वैष्णवता का प्रतीक है कम से कम होना ही चाहिए।

इसके अतिरिक्त साल में दो बार राम चरित्र मानस पारायण पाठ अथवा अखंड नाम संकीर्तन जैसे आध्यात्मिक कार्यक्रम अपने घर में समस्त परिवारिक सदस्यों के साथ मिलकर रखें। जिससे एक तो आपस में जुड़ाव होगा- दूसरा एक आध्यात्मिक माहौल आनेवाली पीढ़ी को देखने को मिलेगा।

रामनवमी, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, पूर्णिमा, अमावस्या, एकादशी अति विशिष्ट दिनों पर उपवास करें और बालकों को भी प्रेरित करें कि उनकी भी हरि वासर में रुचि हो।

मैंने अपनी मानसिक परिकल्पना से धनावंश की रूपरेखा बनाई है। मैंने यह सोचकर यह बातें लिखी है, यदि इस तरह का धनावंश में व्यवहार हो तो आज भी हम अपना अति विशिष्ट स्थान जो अन्य समुदायों ने हमें दिया है, उसे कायम रख सकते हैं।

समाज में फैले व्यसन, फैशन और अन्य अराजकताओं को कम करके ही कोई समाज अपने को श्रेष्ठ समाज कहलवाने का दर्जा कायम रख सकता है। हम धनाजी के शिष्य हैं, वैष्णव हैं, इसलिए हमारा दायित्व और भी अधिक हो जाता है कि हम अपनी वैष्णव पहचान को, अपने धनावंश के गौरव को सुरक्षित रखें और आगे आने वाली पीढ़ी को ये संस्कार धरोहर के रूप में देकर जाएं।

मैंने अपनी मन की भावना को प्रार्थना रूप में मेरे समाज के सामने प्रस्तुत किया है, यदि आपको उचित लगे तो ग्रहण करें।

यदि यह सब कुछ लिखते हुए मैंने कहीं पर अतिशयोक्ति कर दी है तो मुझे पूर्ण आशा और विश्वास है मेरा समाज एक अबोध बालक जानकर मुझे क्षमा करेगा।

कोई हमारा बुरा करना चाहता है तो यह उसके कर्मों में लिखा जाएगा,
हम क्यों किसी का बुरा सोच कर अपना कर्म और वक्त बरबाद करें ।

समाज की पहचान कायम हो

देवदत्त स्वामी, सूरत

हमारा धनावंशी संप्रदाय विशेष समाज है। हमारा अनेक जाति नख हैं। हमारा गोत्र अच्युत हैं यानी हम विष्णु अवतारों के पूजक हैं। हमारा धनावंशी स्वामी संप्रदाय उच्च कोटि का संप्रदाय है। क्योंकि यह ठाकुर जी से प्रीति रखनेवाला एक धार्मिक संप्रदाय जो है। व्यक्तिगत तौर पर मुझे गर्व है कि मैं एक धनावंशी हूं।

हमारे संप्रदाय के गुरु धनाजी महाराज ने धनावंश को भक्ति और ज्ञान का संदेश दिया। प्रभु भक्ति का मार्ग दिखलाकर धनावंशी समाज को एक अपनी अलग पहचान दिलाई। धनावंश को सम्मान का दर्जा दिलाया। हमें इस बात को कभी नहीं भूलना चाहिए। हमारे बुजुर्गों ने महंतद्वारों के माध्यम से अपने ज्ञान का अलख जगाया और अपने नियम नीति व संस्कारों से अपने समाज की पहचान बरकरार रखी है। आज हमारे महंत द्वारे धीरे धीरे कम होते जा रहे हैं,यह एक विचारणीय विषय है। इसके लिए हम सबको विचार करना चाहिए और समरसता का भाव रखते हुए समाज के सभी मूल्यों की संरक्षा करने के लिए सबको तन, मन और धन से आगे आना चाहिए। सवाल यह नहीं है कि कौन क्या कर रहा है। सवाल यह है कि मैं क्या कर सकता हूं। हमें युवा पीढ़ी को भी आगे लाना चाहिए। हमारे समाज की जो आध्यात्मिक धरोहर है, समाज के जो संस्कार हैं, संप्रदाय के जो नीति नियम हैं, उनसे युवाओं को अवगत कराना चाहिए। अन्य जातियों में सम्मान की दृष्टि से देखा जानेवाला हमारा संप्रदाय आज कई विसंगतियों का शिकार बनता जा रहा है। दूसरों का नेतृत्व करनेवाला संप्रदाय आज एक विकट मोड़ पर खड़ा है। अपनी पहचान खोता जा रहा है। विशेष बात यह कि जिनके पास जो जानकारी है, उसको या तो हम सुनते नहीं, या कोई बताना नहीं चाहते हैं। मेरे हिसाब से बताने वाले की सुनो और जिन्हें जो जानकारियां विरासत में मिली है वो शेयर करें।

हमारे जो वैचारिक मतभेद हैं, उनको दूर करके यानी मैं को भुलाकर हम सब एक साथ होकर धनावंशी वट वृक्ष को वापस हरा–भरा करें। हमें कई मुद्दों पर परिचर्चा करनी चाहिए। चर्चा के मुद्दे ये हो सकते हैं। (1) प्रत्येक गांव में एक संगठन बनाया जाए और उस पर गोष्ठी की जाए और अपने धार्मिक नियमों के बारे में बताया जाए, ताकि युवा पीढ़ी को हमारे समाज के संस्कारों के बारे में पता चले, व हमारे अंदर फैली हुई भ्रांतियां दूर हो सकें। (2) समाज में जो हमारी रीति रिवाज हैं, उन पर चर्चा की जाए, एवं समय समय पर सुधार व अपडेट किए जाएं। (3) कभी सुनने में आता है की कुरीति को मिटाया जाए पर सही मानने में वह उस टाइम की रीति नीति थी। पर वह आज के हिसाब से कुछ परिवर्तन मांगती है, इसलिए वह कुरीति नहीं है, उस समय के हिसाब से अच्छी थी, लेकिन उसमें कुछ सुधार किए जाएं। समय के साथ परिवर्तन भी जरूरी है। (4) शिक्षा पर जरूर हमने ध्यान दिया है,पर इस पर और अधिक खासकर महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। साथ में ही व्यवसायिक शिक्षा पर भी जोर दिया जाए। (5) शादी विवाह, दहेज प्रथा, अट्टा सट्टा, के विषयों पर सघन चर्चा की आवश्यकता है। एक धारणा बनती जा रही है कि लड़का सरकारी नौकरी वाला ही हो,यह धारणा टूटनी चाहिए। (6) मृत्यु भोज भी विचार का विषय है। इस पर भी नए सिरे से सोचा जाए। (7) नौकरी के साथ में व्यापार के बारे में भी युवा पीढ़ी को अवगत कराना जरूरी है। (8) मंदिर की डोली भूमि के समाधान पर अपने विचार रखना व संगठन को मजबूत करना और कृषि के बारे में भी विचार करना हमारे प्रमुख विषय हैं। अनेक विचारणीय मुद्दे हैं! इन सब का समाधान एक ही है कि हम एक होकर, नेक होकर संगठन को मजबूत करके हमारे विचारों में तालमेल पैदा करके भाईचारे की भावनाओं को बढ़ाएं। वैचारिक मतभेद को भुलाकर प्रत्येक गांव में एक विचार गोष्ठी करके तहसील स्तर, जिला स्तर और राज्य स्तर पर एकत्रित हो कर चिंतन करें। ध्यान रखें यह सब हमें यह पंथ हमारे गुरु धनाजी महाराज की कृपा से मिला है और हमारे बुजुर्गों ने इसको इतने दिनों तक सींचा है और हमें इस धरोहर को विरासत में दिया है। हमारा सबका फर्ज बनता है कि इस धरोहर को, हम अपनी पहचान को और ऊंचाइयों तक ले जाएं और इसका एक इतिहास बनाएं ताकि उन आत्माओं को संप्रदाय के बारे में पता चले कि हमारे बच्चे हमारी विरासत को संभालकर रखें हुए हैं। जो युवा पीढ़ी है और आने वाली पीढ़ी है, उसको भी हमारा स्वर्णिम इतिहास पढ़ने को मिले।

**सेवा सब की कीजिए मगर आशा किसी से मत रखिए,
क्योंकि सेवा का सही मूल्य सिर्फ ईस्वर ही दे सकता है, इंसान नहीं।**

आलेख

मेरा धनावंश धनाजी के मंदिरों की स्थापना को प्राथमिकता दें

जैसे कि दास तो किसी परतंत्र व निर्बल जाति का नाम होता है, जैसे राज घरानों में दास दासी कहलाने वाले लोग होते थे। इसलिए दास सम्बोधन को निर्बलता व दीनता का वाचक ही समझते हैं। अपने महत्वपूर्ण सम्बोधन का कोई पांच प्रतिशत धनावंशी ही प्रयोग करते हैं। अपने बच्चों के नाम पाश्चात्य संस्कृति के अनुसार ऐसे ऐसे उटपटांग रखते हैं, जिसमें न तो भगवान का सम्बन्ध होता है। न कोई गुणों का सम्बन्ध होता है।

• सीतारामदास परिव्राजक

वर्तमान समय में धनावंश को ही क्या कहा जाए सभी सम्प्रदायों में व जन साधारण में ही आस्तिकता की कमी आई है। यह समय का प्रभाव है, इसे हम कलियुगी प्रभाव भी कह सकते हैं। लड़के लड़कियां अन्तरजातिय विवाह सम्बन्ध करने लगे हैं।

उनकी राज भी कानून के माध्यम से मदद करता है। जाति-पांति सब कानून विरुद्ध हैं। सनातन धर्म को माननेवाली हर जाति व जातीय धर्म पर अधर्म का खतरा मंडरा रहा है। और हमारे धनावंश को तो चारों तरफ से रोग लगा हुआ ही है। यह पंथ अपने जन्मदाता को ही भुला हुआ या नकारे हुए है। एकमात्र पंथ है जो खुद ही नष्ट होने जा रहा है। उससे क्या आशा रखी जाय? फिर भी अपना समाज है और धार्मिक सम्प्रदाय है, इसलिए समाज से मिलने वाले कटु कटाक्षों का शिकार होने पर भी अपनापन नहीं छूटता है। पूर्व समय में धनावंश की धार्मिक परम्पराएं बहुत ही दृढ व सम्भली हुई लगती हैं। जिसके प्रभाव से भक्ति भाव भजन कीर्तन सत्संग आदि के सम्बन्ध में दूसरे समाजों की अपेक्षा धनावंशी समाज की रुचि अधिक व श्रेष्ठ है। आश्चर्य की बात तो यह है कि अपनी परम्परा पंथ से भटका हुआ समाज अभी तक अपनी पदवी (धनावंशी होने) को स्वीकारे बैठा है। सुनते हैं-- हरियाणा प्रान्त के प्रायः वैरागी, सभी सम्प्रदायों को अलग अलग गुरूओं से निर्मित नहीं जानते। सभी के साथ मिलजुलकर विवाह सम्बन्ध करते हैं। जहां अपनी संस्कृति का ज्ञान नहीं रहता या अपनी संस्कृति के प्रति कोई कारण से रुचि नहीं रहती वहां दूसरे संस्कार प्रविष्ट होते देर नहीं लगाते हैं परिणाम स्वरूप संस्कृति बदल जाती है। हरियाणा के लोगों को अपने श्रेष्ठतम इतिहास व परंपराओं की जानकारी नहीं रहनें के कारण वहां अपने साथ रहनेवाले दूसरे समाजों के संस्कार उनमें प्रविष्ट होने लगे फिर वे उनकी धारणा बन गए। कई वैरागी लोग ज्यादा धनवान हो गए तो उनको अपनी संस्कृति में जानकारी होते हुए भी रुचि नहीं रही। कोई संग कुसंग होना या नास्तिकता प्राप्त होना या संस्कृति का ज्ञान न होना ही कारण है। आज का युवा वर्ग वैरागी के दास सम्बोधन का गूढ़ अर्थ न समझने के कारण अपने मन में अनेक भ्रम बनाये बैठा है। जैसे कि दास तो किसी परतंत्र व निर्बल जाति का

खुद को गलत ....सही आदमी ही मान सकता है।

नाम होता है, जैसे राज घरानों में दास दासी कहलाने वाले लोग होते थे। इसलिए दास सम्बोधन को निर्बलता व दीनता का वाचक ही समझते हैं। अपने महत्वपूर्ण सम्बोधन का कोई पांच प्रतिशत धनावंशी ही प्रयोग करते हैं। अपने बच्चों के नाम पाश्चात्य संस्कृति के अनुसार ऐसे ऐसे उटपटांग रखते हैं, जिसमें न तो भगवान का सम्बन्ध होता है। न कोई गुणों का सम्बन्ध होता है। न कोई पदार्थ का सम्बन्ध होता है। न कोई सनातन का सम्बन्ध होता है। कई-कई समाज हैं उनको नाम के साथ सम्बोधन लगाने की आवश्यकता ही नहीं रहती तथा सभी सनातनी भाईयों के अपने अलग अलग सम्बोधन हैं किसी के राम है किसी के चंद हैं, लाल हैं, प्रसाद हैं, कुमार हैं, नाथ हैं, सिंह हैं, अनेक हैं पर वैरागी के तो अपना अपना ही है। इसके सिवाय आज की पीढ़ी और भी एक बहुत बड़ी ग्लानि का शिकार बनी बैठी है। धनावंशीं ठाकुरजी का पुजारी होने के कारण अपने अधिकार के जरिए गांव में फेरी लगाता था जिसका आज की पीढ़ी सिर्फ धन को ही महत्व दे कर अनर्थ खड़ा कर लेती है तथा धनावंश से अलगाव करने जैसा ही रूख दिखाती है। फिर भी धनावंश के मौजूदा प्रबुद्ध मानवगण आपसी विचार विमर्श के द्वारा धनावंश की देखभाल करे तो समाज को सन्मार्ग गामी बनाकर बचा सकते हैं। श्री धनाजी महाराज के आश्रित हो कर ही समाज एक मार्ग का अनुगामी हो सकता है। संवेदनशील भाई लोग कर्णधार बनकर महासभा की स्थापना करें तो क्या असंभव होता है? धनावंशी बाहुल्य क्षेत्रों में धनाजी महाराज के मन्दिरों को प्रचलित करना तो समाज जागृति सफर का पहला कदम है। जयठाकुरजी की।

◆◆◆

रामपटल के अनुसार भक्तों की दिनचर्या तथा भगवत्पूजन

श्रीराम पटल आधुनिक रामानन्द सम्प्रदाय में प्रचलित भगवत पूजन क्रम तथा भक्तों की दिनचर्या का निर्देश करने वाला प्रमुख ग्रंथ है। इसमें वैष्णवों की दिनचर्या पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इसके कुछ प्रमुख मंत्रों के विषय निम्नलिखित है- 1. मंगलाचरण, 2. प्रातः पंचक, 3. पृथ्वी-प्रार्थना मंत्र, 4. मृत्तिका हरणमंत्र, 5. लघु शंका का मंत्र, 6. वाह्य भूमि जाने का मंत्र, 7. मृत्तिका लगाने का मंत्र, 8. तुम्बिका पात्र-शुद्धि मंत्र, 9. काष्ठपात्र शुद्धि मंत्र, 10. पात्रनियर्णय, 11. कुल्ला करने की विधि, 12. द्वादशदन्तधावन, 13. दन्तधावननिधि, 14. स्नान विधि, 15. स्नान संकल्प, 16. शिखामुक्ति, 17. शिखाबंधन, 18. आसन, 19. पंचसंस्कार, 20. द्वादश ऊर्ध व पुराड्र धारण, 21. माला धारण, 22. पुशपवित्र धारण, 23. प्राणायाम विधि, 24. करमाला, 25. अघमर्षण, 26. भूतशुद्धि, 27. प्राणप्रतिष्ठा, 28. गायत्री, 29. सूर्याघ्र्य, 30. जप, 31. शैली, दारुमयी, लौहा, लेप्या, लेख्या, सैकती, मणिमयी, मनोमयी आदि आठ प्रकार की प्रतिमाओं का पूजन। 32. षोडश प्रकार की पूजा, 33. साष्टांग प्रणाम, 34. प्रदक्षिणा, 35. चरणोदक आदि।

षोडश प्रकार पूजा-मंदिर में प्रवेश करके भगवान को प्रणाम कर सांग-सपार्षद उनका स्थापन, नैवेद्यादि रख कर पार्षदों की पूजा, फिर शंख पूजा; उत्थापन, आह्वान, आसन, पात्र, अर्घ्य, मधुपर्क, स्नान, वस्त्र समर्पण, यज्ञोपवीत, भूषणसमर्पण, चन्दन समर्पण, तुलसी समर्पण, पुष्प समर्पण, धूपसमर्पण, दीपक-समर्पण, नैवेद्य समर्पण, मुख प्रक्षालन, ताम्बूल समर्पण, आरती, पुष्पांजलि, भगवान से अपने अपराधों को क्षमा करने की याचना, उनकी प्रदक्षिणा, उन्हें प्रणाम करके शयन कराना, उनके चरणों की सेवा आदि को षोडश प्रकार की पूजा कहा जाता है। यह सेवा बहुत कुछ श्री रामार्चन पद्धति की सेवा प्रणाली से मिलती जुलती है।

सुख व्यक्ति के अहंकार की परीक्षा लेता है और दुःख व्यक्ति के धैर्य की।

धनावंशियों की जिज्ञासा कैसे जागृत हो?

रघुवीर स्वामी-अहमदाबाद

सदियों से धनावंश की स्थिति खराब रही है। मेरे विचार से मैं इसे गर्दिश में खोया हुआ समाज मानता हूं। कुंठित मानसिकता को लेकर जीने वाला मानता हूं। अपनों से ईर्ष्या और द्वेष का भाव रखनेवाला ये समाज हमेशा खुद को अकेला महसूस करता रहा है, फिर भी संभल नहीं रहा है। हर गाँव मे थोड़े घरों का होने से यह समाज दबू बनाता गया। मन्दिर सेवा के बहाने घर-घर जाकर माँगना इस समाज की सबसे बड़ी कमजोरी मानता हूं। मेरी नजर में मैं इसे सबसे घृणित कार्य मानता हूँ। मेरे परिवार के पास न डोली भूमि है, न ही मन्दिर, न ही मेरे पूर्वजों ने ये काम किया,मगर फिर भी अनप गांव के समाज में मोडा शब्द या मांगखानी जात जैसे शब्द बचपन में पहली बार सुने तो मुझे इस जाति में जन्म लेने का दुख हुआ्। मैं मोड़ा शब्द को एक गाली समझता हूं। गांव मे रहते हुए साथ में पने वाले साथियों के साथ जोरदार मारा मारी होती थी। मैं हमेशा खुद को कुंठित समझता। मैं इस जाति के बारे में हमेशा दुविधा में रहा। मेरे पिताजी हमेशा सन्ध्या पाठ करते थे। तुलसी की माला पहनते थे। किसी को अपना हुका और चिलम नहीं देते थे।

मुझे उन्होंने इतना बताया कि हमारे गुरु धना जाट थे और हम पहले तुम्हारे पड़दादा के दादा के समय स्वामी बने। हमारे गाँव में सब जाति से हर क्षेत्र में आगे जाट हैं। हमारे साथ सभी गोत्र के जाटों का भाईचारा था।

पूर्वज कभी बदले नहीं जा सकते किसी भी संजोग में पूर्वज बदल नहीं सकते। एक सन्तान अपने बाप को नहीं बदल सकती। आप पन्थ बदल सकते हो। धर्म बदल सकते हो। मगर पूर्वज और जाति नहीं बदल सकते।धनावंशियों ने या अन्य किसी ने बदलने की कोशिश की है तो उससे समाज पतित हो जाता है। आज हम ये सब देख रहे हैं,जो खुद को स्वयम्भू ब्राह्मण मान बैठे हैं, वे लोग समाज का इतिहास लिखे जाने के पक्ष मे नहीं हैं। इस प्रकार की मानसिकता समाज को कुंठित करती है। मैं ये मानता हूं कि एक सन्तान को उसके मा बाप के नाम से अगर वंचित किया जाए तो वह सन्तान हमेशा खुद को पतित ही समझती है। इसी प्रकार किसी भी पन्थ की असली जाति का असली जातीय इतिहास किसी भी साजिश के तहत खत्म किया जाता है तो वह पन्थ खत्म हो जाता है। इसलिए सबसे पहला कर्तव्य ये बनता है कि समाज को हकीकत से अवगत कराया जाय। और इतिहास लिखा जाना चाहिए, क्योंकि इतिहास ही भविष्य को अतीत का ज्ञान देता है। भूत के बिना वर्तमान और भविष्य निर्धारित हो ही नहीं सकता। या हम यूं कह सकते हैं कि जिसका भूतकाल खत्म कर दिया जाता है। उस समाज का वर्तमान और भविष्य अपने आप ही खत्म हो जाता है।

आजकल जाट जाति धर्मिक सम्मेलन करने लगी है, मगर धनावंशी नहीं। मैं इस बात से अधिक हैरान होता हूं कि धनावंशी समाज को खुद के बारे में जानने की कोई जिज्ञासा क्यूं नहीं है। मैंने अपने कुछ परिचित लोगों को धनावंशी संहिता तथा पत्रिका और कुछ अन्य जानकारी दी मगर चुपी नहीं टूटती। कोई जवाब नही आता है।जब तक धनावंशी समाज अपने गुरु धना जाट को अपना गुरु नहीं मानेगा, मेरे अपने विचार से तब तक धनावंशी नहीं बन पायेगा।

स्वर्ग और मोक्ष का ठेकेदार कोई नहीं है, मन की पवित्रता ही स्वर्ग और मोक्ष है।

धनावंश के बारे में विभिन्न मुद्दे

● प्रेमदास स्वामी–झाड़ेली

अध्यात्म

समाज व्यवसाय व आर्थिक स्थिति से थोड़ा सुदृढ हो रहा है, लेकिन समाज के इतिहास एवं आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाए तो पिछले 60–70 वर्षों में इसका सबसे ज्यादा पतन हुआ है। आज की स्थिति यह है– यदि किसी से एक छोटा सा सवाल भी पूछा जाए कि धनावंशी कौन है तो भी इसका जवाब कोई नहीं दे पाता। यदि हमें यह भी पता नहीं कि हम कौन हैं? हमारी पहचान क्या है? हमारे पंथ प्रवर्तक कौन हैं?तो हमारा समाज किस प्रकार अस्तित्व में रह सकता है? जब हमारे पास इन सवालों के जवाब नहीं हैं तो कैसे हम अपने आप को कहेंगे कि हमारा सम्प्रदाय सबसे अच्छा है? एवं कैसे हम आने वाली पीढियों को अपने समाज की सब आवश्यक बातें बता पाएंगे। मैं उदारहण के तौर पर बात करूं तो जंहा कम संख्या में धनावंशी हैं– जैसे हरियाणा, पंजाब आदि प्रांत। वहाँ आजकल धनावंशी एवं दूसरे वैष्णव सम्प्रदायों में लोगो को फर्क ही पता नहीं है। इसके चलते वे लोग सभी वैष्णव सम्प्रदायों में शादी–सम्बन्ध कर रहे हैं्। वंहा तो आजकल दास व स्वामी जैसे सम्बोधन भी अपने नाम में नही लगाते, जिसके चलते नाम से यह पता लगाना मुश्किल है कि यह वैष्णव है या कोई और यदि अध्यात्म की दृष्टि से अब भी हम नही संभले तो आने वाले कुछ सालों में धनावंशी सम्प्रदाय अपना अस्तित्व खोकर सर्व स्वामी समाज के बीच कहीं लुप्त हो जायेगा।

अध्यात्म की दृष्टि से सुधार के लिये हमें कुछ कदम जल्दी ही उठाने पड़ेंगे जैसे कि

सबसे पहले–अपने पंथ प्रवर्तक श्री धनाजी महाराज को सर्व सम्मति से स्वीकार करना। वे समाज के आदि गुरु रहे हैं तो उन्हें स्वीकारने में दिक्कत क्या है?

दूसरी बात–हमारे समाज का एक सुन्दर इतिहास हो, जिस पर हम सभी को गर्व हो तथा अपने आप को धनावंशी कहलाने में जातिय अभिमान महसूस हो।

तीसरी बात– समाज का एक ऐसा स्थल बने जहां हम सबकी आस्था हो तथा साल में एक बार वहां धार्मिक आयोजन भी हो ताकि सब धनावंशी एक जगह इकट्ठे हो सकें।

चौथी बात–समाज में कुछ आचार्य या संत नियुक्त हों जो समाज को अध्यात्म के बारे में हमेशा बताते रहें्।

शिक्षा

शिक्षा की दृष्टि से देखा जाए तो सबसे पिछड़े वर्गों में धनावंश की गिनती होती है। इस स्थिति के लिए समाज की संस्थायें भी जिम्मेदार हैं,जिन्होंने आजतक कोई ठोस कार्य नहीं किए्। शिक्षा में सुधार के लिए मेरे कुछ विचार

समाज की महत्वपूर्ण संस्थाएं लोगों में यह

संसार में व्यक्ति को सबसे ज्यादा विचलित और व्यग्र स्वयं उसके अपने विचार करते हैं।

जागृति फैलाये कि बिना शिक्षा के ना ही परिवार का भविष्य है एवं ना ही समाज का। ये संस्थाएं इस बात को भी सुनिश्चित करे को कोई भी बच्चा बिना स्कूल के ना रहे।

समाज के पास एक अलग फण्ड हो जिससे होनहार बच्चों की पाई में सहायता की जा सके तथा उसे मार्गदर्शन दिया जा सके।

लड़कियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना भी जरूरी है ताकि आने वाली पींी में सब शिक्षित हो। क्योंकि यदि माँ शिक्षित होगी तो वह अपनी संतान की शिक्षा में कोई कमी नहीं रहने देगी।

आर्थिक स्थिति

धनावंशी ज्यादातर गाँवों में बसते हैं, तथा अभी भी खेती उनका प्रमुख व्यवसाय है। आजकल खेती की जो दयनीय हालत है, उसके कारण धनावंशी समाज की हालत भी पिछड़ी हुई है। शिक्षा में पिछड़ापन होने के कारण सरकारी व प्राइवेट नौकरी में भी गिने चुने लोग हैं। प्राइवेट नौकरी में जो हैं वे भी ज्यादातर निम्न श्रेणी के पदों पर ही हैं।

आजकल कुछ परिवारों ने कुछ व्यवसाय स्थापित किये हैं, यह थोड़ी राहत की बात है। इसकी वजह से आज युवाओं को रोजगार भी मिल रहे हैं एवं उनके सहारे नए धंधे भी खुल रहे हैं। लेकिन मैं कहूंगा कि अभी जितने भी परिवार हैं जिनके काफी अच्छे धंधे स्थापित हो चुके हैं, उनके रिश्ते व सम्बन्ध आसानी से हो जाते हैं, वे लोग अच्छी शादियां कर सकते हैं, अच्छे मायरे भर सकते हैं, काफी दहेज दे सकते हैं, अच्छा औसर कर सकते हैं, लेकिन समाज को सहारा देने की हैसियत किसी में नही है। यदि हम हर साल के मुनाफे से 2-5 प्रतिशत समाज के लिए दान नही दे सकते हैं, तो समाज कैसे चलेगा? सिर्फ एक परिवार की उन्नति से समाज की उन्नति की कम संभावनाएं हैं,जबकि समाज की उन्नति से परिवार की उन्नति होने की भरपूर संभावनाएं रहती हैं।

***

श्री धनाजी

घर आए हरिदास तिनही गोधूम खवाए।
तात मात डर खेत थोथ लांगलहिं चलाए।।
आस पास कृषिकार खेत की करत बड़ाई।
भक्त भजे की रीति प्रगट परतीति जु पाई।।
अचरज मानत जगत मैं कहुँ निपज्यौ कहुँवै बयो।
धन्य धना के भजन कों बिनहिं बीज अंकुर भयो।।62।।

भावार्थ-परम पुण्यवान्, प्रंशसनीय भक्त श्री धनाजी की भगवद्भागवत सेवा की हम सराहना करते हैं, जिनके खेत में बिना बीज बोये ही अंकुर जमा। घर पर वैष्णवों के आने पर बोने के लिए रखा हुआ बीज का गेहूँ उन्हें खिला दिये और माता-पिता के डर से खेत में खाली-खाली हल चला दिये। (परंतु सन्त सेवा के प्रताप से बिना बोये भी खेत में गेहूँ बढ़िया जमा अत:) पास-पड़ौस के किसान इनके खेत की बड़ाई करते थे। (जब श्री धनाजी ने जाकर देखा तो) साधु सेवा की प्रीति रीति एवं प्रतीत को प्रत्यक्ष पाया। इस बात को सुनकर संसार के लोग आश्चर्य मानत हैं कि बोया कहीं अन्य गया और उपजा कहीं अन्यत्र।।62।।

बुराई बड़ी मीठी है, उसकी चाहत कभी कम नहीं होती,
सच्चाई बड़ी कड़वी है, सबको हजम नहीं होती।

आलेख

मेरा धनावंश मेरा सौभाग्य

शिवलाल स्वामी

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे श्री धनाजी महाराजके पद चिह्नो अनुसरण एवं उनके सुझाए आध्यात्मिक, सात्विक सरल जीवन यापन करने वाले कुल अर्थात धनावंशी स्वामी पंथ में जन्म मिला है। जबकि आज लोग आध्यात्मिकता को जीवन–विरोधी या जीवन से पलायन मानते हैं। लोगों में भ्रामक धारणा है कि आध्यात्मिक जीवन में आनंद लेना वर्जित है और कष्ट झेलना जरूरी है। जबकि सच्चाई यह है कि आध्यात्मिक होने के लिए हमारे बाहरी जीवन से कोई लेना–देना नहीं है। जैसा कि श्री धनाजी महाराज की लोक प्रचलित जनश्रुतियों में सुनने और पढनें को मिलता है।

आध्यात्मिक होने का मतलब है, भौतिकता से परे जीवन का अनुभव कर पाना। अगर हमें बोध है कि हमारे धनावंश स्वामी समाज–पंथ के लिए कोई और जिम्मेदार नहीं है, बल्कि हमखुद इसके संरक्षक हैं,तो हम सही मार्ग पर हैं। हमजो भी कार्य करते हैं, अगर उसमें सभी की भलाई निहित है, तो हम आध्यात्मिक व्यक्ति हैं। बाहरी परिस्थितियां चाहे जैसी हों, उनके बावजूद भी अगर हम अपने अंदर से हमेशा प्रसन्न और आनंद में रहते हैं, तो आध्यात्मिक हैं एवं श्रीधनाजी के अनुयायी हैं।

आज मैं अपने समाज के अंदर आज के युवा वर्ग को देखता हूं तो पाता हूं कि वेभौतिकतावाद की चकाचौंध में लिपटे पड़े हैं, उन्हें पता ही नहीं हम कौन हैं? हमारी क्या पहचान है? हमारे पंथ के संस्थापक हमारे पंथ के गुरु कौन हैं? हमारी कैसी पवित्र परंपराएं रही हैं? यह वर्ग निरूत्तर है। हमारी सभ्यता और संस्कृति की पहचान भी खो चुकी है। अन्य समाज के संपर्क में आने से अपने हित अनहित की चिंता भी उनको नहीं है। अनेक बुराइयों ने उनको घेर लिया है यहां तक कि तामसिक आहार, मद्यपान नशा से भी परहेज नहीं करते।

मैं इन तमाम बुराइयों की जड़ अपने पंथ में प्रचारकों के नितांत अभाव को मानता हूँ। हमारे सन्त महंतों ने कभी इस पंथ की पवित्र अवधारणा से अवगत ही नहीं कराया। महंत की पदवी को केवल अपने और अपने परिवार की उदरपूर्ति का जरिया बनाया। समाज के

जीवन की सबसे बड़ी ग़लती वही होती है, जिस ग़लती से हम कुछ सीख नहीं पाते।

युवा वर्ग के समझ में आए तो कैसे आए? साहित्य समाज का दर्पण हुआ करता है, किंतु हमारे पंथ का पर्याप्त साहित्य भी नहीं है। कोई लिखित इतिहास नहीं है। आज का शिक्षित युवा हर चीज का लिखित प्रमाण मांगता है, यदि अभी स्थिति नहीं संभली, प्रचुर मात्रा में साहित्य उपलब्ध नहीं हुआ तो हमारे समाज की कोई पहचान शेष नहीं बचेगी।

समाज की विशिष्ट पहचान बनाए रखने के लिए बुद्धिजीवी विद्वान एवं विदुषी बहनों को वैश्विक भौतिकतावाद की चकाचौंध से दूर अपने समाज के अंदर की कमजोरियों को दूर करना होगा। सामाजिक संस्थाओं को श्री धनाजी महाराज की अवधारणा कायम करनी होगी। ईर्ष्या, द्वेष का परित्याग कर युवाओं को जागृत करने के लिए विपुल साहित्य उपलब्ध करवाना होगा। समाज के लिए जो अच्छा कार्य कर रहे हैं,साहित्य सृजन कर रहे हैं, शोध कार्य करनेवाली प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करना होगा। आधुनिक सोशल मीडिया का भरपूर उपयोग समाज हित में करना होगा, अन्यथा यह समाज अपनी अस्मिता को बचा पाने में असमर्थ रहेगा। प्रतिभावान युवाओं को अपने समाज के उत्थान के काम हाथ में लेने होंगे। आज वह जमाना नहीं है कि संत महंतों को गांव गांव जाकर के अपने समाज के लिए काम करना पड़े– प्रवचन देने पड़े। आज संचार के साधनों ने, सोशल मीडिया ने बहुत बड़ा मंच उपलब्ध करवा दिया है, जिससे प्रबुद्ध वर्ग चाहे तो बड़ी आसानी से इस महाभियान को सफल बना सकते हैं। ज्यादा नहीं तो अन्य समाजों से प्रेरणा लेकर ही आगे बने की एक ललक जागृत कर सकते हैं। हमें शिक्षा तथा प्रजातंत्र में प्रशासनिक पदों एवं राजनैतिक मंच पर पहुंच बनानी होगी। सामाजिक वोट बैंक का एहसास कराना होगा।

भक्त धनाजी का एक पद

रे चित्त चेतसी की न दयालु, दमोदर विवहित जानसि कोई।
जे धावहि खंड ब्रह्मंड कउ, करता करै जु होई।।
जननी केरे उदर उदक महिं, पिंड किया दस द्वारा।
देइ अहार अगनि महिं राखै, ऐसा खसम हमारा।।
कुंभी जल मांहि तन तिसु, बाहरि पंख खीर निगह नाही।
पूरन परमानंद मनोही, समझि देखु मन मांहि।।
पाषणी कीट गुप्तु होइ रहता, सोचो मारगु नाही।
कहै धना पूरन ताहू, को मत रे जीअ उराही।।

दुनिया का सबसे आसान काम है विश्वास खोना और कठिन काम है विश्वास पाना और उससे भी कठिन है, विश्वास को बनाए रखना।

आलेख

वैष्णवता का स्वरूप

श्री रामान्दन्दाचार्य का सम्प्रदाय ही प्रमुख वैष्णव सम्प्रदाय है। और भी बहुत ही शाखा-उपशाखाएं वैष्णव सम्प्रदायों की है। महाराष्ट्र में निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव, मुक्ताबाई, नामदेव, तुकाराम, गुजरात के श्री नरसिंह मेहता, उत्तर भारत के सूरदास, तुलसीदास आदि, आसाम के श्री शंकरदेव, राजस्थान की मीराँबाई आदि सभी वैष्णवग्रणी संत हुए हैं। दक्षिण में श्रीरामानुजाचार्य से बहुत पहले भी शकठकोप, विष्णुचित्ति, भक्तपदरेणु, कुलशेखर और देवी अण्डाल आदि अल्वार वैष्णव महात्मा हो गये हैं, जो प्रमोन्मत्तता के परम आदर्श हैं। ये सभी वैष्णव धर्म परम सुन्दर स्वरूप का ही प्रकाश करते हैं।

मूकं करोति वाचालं पङ्गु लङ्गयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्।।
सर्व-त्याग करि जे सदा, सेवत हरि-पद-मूल।
बंदौ तिन वैष्णव-चरन सुचि पद-पंकज-धूल।।

वैष्णव धर्म का प्राचीन नाम है सात्वतधर्म। इसी के भक्त, भागवत, वैष्णव, पाञ्चरात्र, वैखानस, कर्महीन आदि अनेक भेद प्राचीन शास्त्रों में पाये जाते है। वैष्णव धर्म का मूल वेद है।

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।
दिवीव चक्षुराततम्।

विष्णु के इस परमपद का संज्ञान ही वैष्णव-धर्म है। वैष्णवों ने प्रधान रूप में चार महान सद्गुरुओं की परम्परा स्वीकार की है-श्री, ब्रह्मा, रुद्र और सनकादि। इन्हीं के नामों पर सम्प्रदाय चले। आजकल सम्प्रदाय शब्द का बड़ा दूषित अर्थ किया जाता है, किसी को द्वेष-हिंसा करते देखकर ही उसे साम्प्रदायिक कह दिया जाता है। वास्तव में सम्प्रदाय का अर्थ है-

शिष्टानुशिष्टोपदिष्टो मन्त्रः सम्प्रदायः।

पूर्व आचार्य के समीप प्राप्त मन्त्र और साधना का नाम ही सम्प्रदाय है। इसमें द्वेष-हिंसा की तो कहीं कल्पना ही नहीं है और वैष्णव सम्प्रदाय तो भूत मात्र में भगवान को देखकर अत्यन्त विनम्र भाव से सबको नमस्कार, सबकी सेवा तथा सबका हित-

कल के लिए सबसे अच्छी तैयारी यह है कि आज अच्छा करो।

साधन करता है। उपर्युक्त चार गुरु-परम्पराओं से बने हुए चार सम्प्रदाय प्रधान माने जाते हैं-

रामानुजं श्रीः स्वीचक्रे मध्वाचार्यं चतुर्मुखः।
श्रीविष्णुस्वामिनं रुद्रो निम्बादित्यं चतुस्सनः।।

श्री लक्ष्मीजी की कृपा से रामानुज, ब्रह्मा की अनुकम्पा से मध्वाचार्य, रुद्र के अनुग्रह से विष्णु स्वामी और सनकादि मुनियों के प्रसाद से निम्बार्काचार्य साधना का सन्मार्ग दिखलाते हुए आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। श्री वल्लभाचार्य, श्री विष्णु स्वामी के द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदाय के ही आचार्य माने जाते हैं। कुछ महानुभाव इनके पुष्टिमार्ग को पृथक भी मानते हैं। बंगाल की वैष्णव प्रेम सुधा-धारा बहुत अंश में श्री मध्वाचार्य के मत से प्रभावित है, ऐसा महानुभावों का मानना है। इनमें श्री रामानुज का श्री सम्प्रदाय विशिष्टाद्वैतवादी और भगवान लक्ष्मीनारायण का उपासक है। श्री मध्वाचार्य का द्वैतवादी और श्री राधाकृष्ण का उपासक है। श्री विष्णु स्वामी का वल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैतवादी और बाल गोपाल का उपासक है। श्री निम्बार्काचार्य का द्वैताद्वैतवादी और श्री राधाकृष्ण का उपासक है एवं बंगाल के प्रेम के ठाकुर श्री गौराङ्गदेव का गौड़ीय सम्प्रदाय अचिन्त्यभेदाभेदवादी कहा जाता है तथा श्री राधाकृष्ण का उपासक है। ये सभी एक ही परमत्तत्व की उपासन-सुधा सरिता की परम मधुर सुधा-तरङ्गे हैं और ये सभी वस्तुः सात्वत सम्प्रदाय के ही अन्तर्गत है। इसके अतिरिक्त श्री रामान्दन्दाचार्य का सम्प्रदाय भी प्रमुख वैष्णव सम्प्रदाय है। और भी बहुत ही शाखा-उपशाखाएं वैष्णव सम्प्रदायों की है। महाराष्ट्र में निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव, मुक्ताबाई, नामदेव, तुकाराम, गुजरात के श्री नरसिंह मेहता, उत्तर भारत के सूरदास, तुलसीदास आदि, आसाम के श्री शंकरदेव, राजस्थान की मीराँबाई धनाजी का धनांवश आदि सभी वैष्णवग्रणी संत हुए हैं। दक्षिण में श्रीरामानुजाचार्य से बहुत पहले भी शकठकोप, विष्णुचित्ति, भक्तपदरेणु, कुलशेखर और देवी अण्डाल आदि अल्वार वैष्णव महात्मा हो गये हैं, जो प्रमोन्मत्तता के परम आदर्श हैं। ये सभी वैष्णव धर्म परम सुन्दर स्वरूप का ही प्रकाश करते हैं।

वेद, उपनिषद, नारद-पाञ्चरात्र, महाभारत, रामायण, पुराण, तन्त्र आदि असंख्य महामान्य ग्रन्थों में वैष्णवधर्म के लक्षणों तथा इतिहास का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है। श्री मद्भागवत के, जो वैष्णवों का सर्वमान्य ग्रन्थ है तथा परमहंस संहिता के नाम से प्रख्यात है, ग्यारवें स्कन्ध भागवतधर्म के वर्णन-प्रसंग में वैष्णवता या वैष्णवों का स्वरुप लक्षण बतालो हुए कहा कहा गया है-

सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यारत्मन्येष भागवतोत्तमः।।
(११/२/४५)

आत्मस्वरूप भगवान समस्त प्राणियों में आत्मा रूप से नियन्तारूप से स्थित हैं। जो कहीं भी न्याधिकता न देखकर सर्वत्र परिपूर्ण भगवत्सत्ता को ही देखता है और साथ ही समस्त प्राणी और समस्त पदार्थ आत्मस्वरूप भगवान् में ही स्थित है-वास्तव में भगवत्स्वरूप ही है-इस प्रकार का जिसका अनुभव है, उसे भगवान का परम प्रेमी उत्तम भागवत-श्रेष्ठ वैष्णव समझना चाहिए।

ईश्वर तद्धीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च।
प्रेममैत्रीकृपोपेक्षा यः करोति स मध्यमः।।
(११/२/४६)

जो भगवान से प्रेम, उसके भक्तों से मित्रता, दुखी और अज्ञानियों पर कृपा तथा भगवान से द्वेष करने वालों की उपेक्षा करता है, वह मध्यम कोटि का भागवत-वैष्णव है।

आर्चायामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते।
न तद्भक्तेषु चान्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः।।
(११/२/४७)

जो भगवान के अर्चा विग्रह-मूर्ति आदि की पूजा तो श्रद्धा से करता है, परंतु भगवान के भक्तों या दूसरे लोगों की विशेष सेवा-शुश्रूषा नहीं करता, वह साधारण श्रेणी का भगवद्भक्त-वैष्णव है।

गृहीन्वापीन्द्रियैरर्थान् यो न द्वेष्टि न हृष्यति।
विष्णोर्मायामिदं पश्यन् स वै भागवतोत्तमः।।

प्रशंसा की भूख अयोग्यता की परिचायक है,
काबिलियत की तारीफ तो विरोधियों के भी दिल से निकलती है।

(११/२/४८)

जो कर्ण, नेत्र आदि इन्द्रियों के द्वारा शब्द-रूप आदि विषयों का ग्रहण तो करता है, परंतु प्रतिकूल विषयों से द्वेष नहीं करता और अनुकूल विषयों के मिलने पर हर्षित नहीं होता- उसकी यह दृष्टि बनी रहती है कि यह सब हमारे भगवान् की लीला-माया है, वह पुरुष उत्तम भागवत-श्रेष्ठ वैष्णव है।

देहन्द्रियप्रमाणमनोधियां यो
जन्माप्ययक्षुद्भयतर्षकृच्छैः।
संसारधर्मैरविमुह्यमानः
स्मृत्या हरर्भागवतप्रधानः।। (११/२/४९)

संसार के धर्म हैं-जन्म, मृत्यु, भूख-प्यास, श्रम-कष्ट, भय और तृष्णा। ये क्रमशः शरीर, प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि को प्राप्त होते ही रहते हैं। जो पुरुष भगवान की स्मृति में इतना तन्मय रहता है कि इनके बार-बार होते जाते रहने पर भी उनसे तनिक भी मोहित नहीं होता, वह उत्तम भागवत-श्रेष्ठ वैष्णव है।

न कामकर्मबीजानां यस्य चेतसि सम्भवः।
वासुदेवैकनिलयः स वै भगवतोत्तमः।।
(११/२/५०)

जिसके मन में विषय-भोग की इच्छा, विषयार्थ कर्म-प्रवृत्ति और उनके बीज-वासानओं का उदय नहीं होता और जो एकमात्र भगवान वासुदेव में ही निवास करता है, वह उत्तम भगवद् भक्त-श्रेष्ठ वैष्णव है।

न यम्य जन्मकर्मम्यां न वर्णाश्रमजातिभिः।
सज्जतेऽस्पिहन्नम्भावो देहे वै स हरेः प्रियः।।
(११/२/५१)

जिसका इस शरीर में न तो सत्कुल में जन्म एवं तपस्या आदि कर्म से तथा न वर्ण, आश्रम एवं जाति में ही अहंभाव होता है, वह निश्चय ही भगवान श्री हरि का प्यारा वैष्णव है।

न यस्य स्वः पर इति वित्तेष्वात्मनि वा भिदा।
सर्वभूतसमः शान्तः स वै भागवतोत्तमः।।
(११/२/५२)

जो धन-सम्पति अथवा शरीर आदि में यह अपना और यह पराया इस प्रकार का भेद-भाव नहीं रखता, समस्त पदार्थों में समस्वरूप परमात्मा को देखता है, समभाव रखता है तथा किसी भी घटना अथवा संकल्प से विक्षिप्त न होकर शान्त रहता है, वह भगवान का उत्तम भक्त-श्रेष्ठ वैष्णव है।

त्रिभुवनविभवहेतवेअप्यकुण्ड
स्मृतिरजितात्मसुरादिभिर्विमृग्यात्।
न चलति भगवत्पदारविन्दा
क्लवनिमिषार्धमपि यः स वैष्णवाक्यः।।
(११/२/५३)

राजन्। बड़े बड़े देवता और ऋषि मुनि भी अपने अन्तःकरण भगवन्मय बनाते हुए जिन्हें ढूंढते रहते हैं-भगवान के ऐसे चरण कमलों में आधे क्षण, आधे पलके लिए भी जो कभी नहीं हटता, निरन्तर उन चरणों की संनिधि और सेवा में ही संलग्न रहता है; यहां तक कि त्रिभुवन की राज्य लक्ष्मी दी जाने पर भी वह भगवत्स्मृति में निरन्तर लगा ही रहता है, उस राज्य लक्ष्मी की ओर ध्यान नहीं देताः वही पुरुष वास्तव में भगवद्भक्त वैष्णव में अग्रगण्य है, सबसे श्रेष्ठ है।

भगवत उरुविक्रमाङ्घ्रिशाखा
नखमणिचन्द्रकया निरस्ततापे।
हृदि कथमुपसीदतां पुनः स
प्रभवति चन्द्र इवोदितेऽर्कतापः।। (११/२/५४)

निखिल सौन्दर्य-माधुर्य निधि भगवान के चरणों के अङ्गुली नख की मणिचन्द्रिका से जिन शरणागत भक्तजनों के हृदय का संताप एक बार दूर हो चुका है, उनके हृदय में वह ताप फिर कैसे आ सकता है, जैसे चन्द्रोदय होने पर सूर्य का ताप नहीं लग सकता।

विसृजति हृदयं थस्य साधा-
हरिरवशाभिहितोऽप्यघौघनाशः।
प्रणयरशनया धृताङ्घ्रिपद्मः
स भवति भागवतप्रधान उक्तः।। (११/२/५५)

विवशता नामोच्चारण करने पर भी सम्पूर्ण पाप राशि को नष्ट कर देने वाले स्वयं भगवान श्री हरि जिसके हृदय को क्षण भर के लिए भी नहीं छोड़ते है; क्योंकि उसने प्रेम की रस्सी से उनके चरण-कमलों

मेरा दर्द किसी के लिए हंसने की वजह हो सकता है,
पर मेरी हंसी कभी भी किसी के दर्द की वजह नहीं होनी चाहिए।

को बाँध रखा है, वास्तव में ऐसा पुरुष ही भगवान के भक्तों में प्रधान है।

इस श्रेष्ठ वैष्णवता की प्राप्ति के लिए नीचे लिखे साधन करने चाहिए-

सर्वतो मनसोऽसङ्गमादौ सङ्ग च साधुष।
दयां मैत्रीं प्रश्रयं च भूतेष्वद्धा यथोचितम्।।
(११/३/२३)

पहले शरीर, संतान आदि में मन की अनासक्ति सीखे। फिर भगवान के भक्तों से प्रेम कैसा करना चाहिए-यह सीखे। इसके पश्चात प्राणियों के प्रति यथायोग्य दया, मैत्री और विनय की निष्कपट भाव से शिक्षा ग्रहण करे।

शौचं तपस्तितिक्षां च मौनं स्वाध्यायमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसां च समत्वं द्वंद्वसंज्ञयो:।। (११/३/२४)

मिट्टी, जल आदि से बाह्य शरीर की पवित्रता, छल-कपट आदि के त्याग से भीतर की पवित्रता, अपने धर्म का अनुष्ठान, सहनशक्ति, मौन, स्वाध्याय, सरलता, ब्रह्मचर्य, अहिंसा तथा शीत-उष्ण, सुख-दुख आदि द्वंद्वों में हर्ष विषाद रहित होना सीखे।

सर्वत्रात्मेश्वरान्वीक्षां कैवल्यमनिकेतताम्।
विविक्तचीरवसनं संतोषं येन केनचित्।।
(११/३/२५)

सर्वत्र अर्थात् समस्त देश, काल और वस्तुओं में चेतन रूप से आत्मा और नियन्ता रुप से ईश्वर को देखना, एकान्त सेवन, यही मेरा घर है-ऐसा भाव न रखना, गृहस्थ हो तो पवित्र वस्त्र पहनना और त्याग हो तो फटे-पुराने पवित्र चिथड़े, जो कुछ प्रारब्धध के अनुसार मिल जाये, उसी में संतोष करना सीखे।

श्रद्धां भागवते शास्त्रेऽनिन्दामन्यत्र चापि हि।
मनोवाक्कर्मदण्डं च सत्यं शमदमावपि।।
(११/३/२६)

भगवान की प्राप्ति का मार्ग बतलाने वाले शास्त्रों में श्रद्धा और दूसरे किसी भी शास्त्र की निन्दा न करना, भगवच्चिन्तन के द्वारा मन का, मौन के द्वारा वाणी का और वासना हीनता के अभ्यास से कर्मो का संयम करना, सत्य बोलना, इन्द्रियों को अपने-अपने गोलकों में स्थिर रखना और मन को कहीं बाहर न जाने देना सीखें।

श्रवणं कीर्तन ध्यानं हरेरद्भुतकर्मण:।
जन्मकर्मगुणानां च तदर्थेऽखिलचेष्टितम्।।
(११/३/२७)

राजन्। भगवान की लीलाएं अद्भुत हैं। उनके जन्म, कर्म और गुण दिव्य हैं। उन्हीं का श्रवण, कीर्तन और ध्यान करना शरीर से जितनी भी चेष्टाएं हो, सब भगवान के लिये करना सीखें।

इष्टं दत्तं तपो जप्तं वृतं यच्चात्मन: प्रियम्।
दारान् सुतान् गृहान् प्राणान् यत् परस्मैनिवेदनम्।।
(११/३/२८)

यज्ञ, दान, तप अथवा जप, सदाचार का पालन और स्त्री, पुत्र, घर, अपना जीवन, प्राण तथा जो कुछ अपने को प्रिय लगता हो, सबका-सब भगवान के चरणों में निवेदन करना, उन्हें सौंप देना सीखे।

एवं कृष्णात्मनाथेषु मनुष्येषु च सौहृदम्।
परिचर्यां चौसयन्त्र महत्सु नृपु साधुषु।।
(११/३/२९)

जिन संत पुरुषों ने सच्चिदानन्दस्वरुप भगवान् श्रीकृष्ण का अपने आत्मा और स्वामी के रुप में साक्षात्कार कर लिया हो, उनसे प्रेम, और स्थावर, जङ्गम दोनों प्रकार के प्राणियों की सेवा, विशेष करके मनुष्यों की, मनुष्यों में भी परोपकारी सजनों की और उनमें भी भगवत्प्रेमी संतों की करना सीखे।

परस्परानुकथनं पावनं भगवद्यश:।
मियो रुतिर्मिथस्तुष्टिर्निर्त्तिर्मिथ आत्मन:।।
(११/३/३०)

भगवान के परम पावन यश के सम्बन्ध में ही एक-दूसरे से बातचीत करना और इस प्रकार के साधकों के इकट्ठे होकर आपस में प्रेम करना, आपस में संतुष्ट रहना और प्रपञ्च से निवृत्त होकर आपस में ही आध्यात्मिक शान्ति का अनुभव करना सीखे।

स्मरन्त: स्मारयन्तश्च मिथोऽघौघहरं हरिम्।
भक्त्या संजातया भक्त्या बिभ्रत्युत्पुलकां तनुम्।।

आदतें और संस्कार हमें बताती है की, हम दो कौड़ी के हैं या सो कौड़ी के।

(११/३/३१)

राजन! श्रीकृष्ण राशि-राशि पापों को एक क्षण में भस्म करते देते हैं। सब उन्हीं का स्मरण करें और एक-दूसरों को स्मरण करावें। इस प्रकार साधन-भक्ति का अनुष्ठान करते-करते प्रेम भक्ति का उदय हो जाता है और वे प्रमोद्रक से पुलकित शरीर धारण करते हैं।

कचिद् रदन्त्यच्यूतचिन्तया कचि-
द्धसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिका:।
नृत्यन्ति गायन्त्यनुशीलन्त्यजं
भवन्ति तूष्णीं परमेत्य निवृतां:।। (११/३/३२)

उनके ह्वदय की बड़ी विलक्षण स्थिति होती है। कभी-कभी वे इस प्रकार चिन्ता करने लगते हैं कि अब तक भगवान नहीं मिले, क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, किससे पूछूँ, कौन मुझे उनकी प्राप्ति करावे? इस तरह सोचते-सोचते वे रोने लगते हैं, तो कभी भगवान की लीला की स्फूर्ति हो जाने से ऐसा देखकर कि परमैर्श्वशाली भगवान गोपियों के डर से छिपे हुए हैं, खिलखिलाकर हँसने लगते हैं। कभी-कभी उनके प्रेम और दर्शन की अनुभूति से आनन्दमग्न हो जाते है तो, कभी लोकातीत भाव में स्थित होकर भगवान के साथ बातचीत करने लगते हैं। कभी मानो उन्हें सुना रहे हों, इस प्रकार उनके गुणों का गान छेड़ देते हैं और कभी नाच-नाचकर उन्हें रिझाने लगते हैं। कभी-कभी उन्हें अपने पास न पाकर इधर-उधर ढूंढने लगते हैं, तो कभी-कभी उनके एक होकर, उनकी सन्निधि में स्थित होकर परम शान्ति का अनुभव करते और चुप हो जाते हैं।

इति भागवातान् धर्मान् शिक्षन् भवत्या तक्षुस्थया।
नारायणपरो मायाभञ्जस्तरति दुस्तराम्।।
(११/३/३३)

राजन! जो इस प्रकार भागवत धर्मों की शिक्षा ग्रहण करता है, उसे उनके द्वारा प्रेम भक्ति की प्राप्ति हो जाती है और वह भगवान नारायण के परायण होकर उस माया को अनायास ही पार कर जाता है, जिसके पंजे से निकलना ही कठिन है।

इन लक्षणों तथा साधनों से वैष्णवता का स्वरूप भलीभांति ध्यान में आ गया होगा। वास्तव में वैष्णव भक्त अपने को प्रभु का ही स्वरुप मानता है। तुलसीदासजी कहते हैं-

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर आप स्वामि भगवंत।।
उमा जे रामचरन रत बिगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध।।
सीयराममय सब जग जानी।
करौ प्रनाम जो जुग पानी।।

केवल मुनष्यों में ही नहीं, चेतन प्राणियों में ही नहीं भगवान के भक्त वैष्णवजन जड़-चेतन सभी में अपने प्रभु भगवान का दर्शन करके सबको नसस्कार करते है। श्रीमद्भावत कहा गया है-

स्व. वायुमग्निं सलिलं महीं च
ज्योतीषि सत्वानि दिशो द्रुमादीन।
सरित्ससुद्राश्च हरे: शरीरं यरिंकच भूतं
प्रणमेदनन्य:।। (११/२/४१)

आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, नक्षत्रादि, प्राणी, दिशाएं, वृक्ष-लता, नदियाँ और समुद्र जो कुछ भी है, सभी भगवान् हरिका शरीर ही है, अतष सबको अनन्य भाव से प्रणाम करे।

श्रीमद्भवद्गीता में जिस परमधर्म का उपदेश भगवान ने किया है, उसी का वस्तुत: पाञ्चरात्र आगम में वर्णन है अथवा उस अति प्राचीन आगमोक्त भक्ति-धर्म विग्रह ही भगवान ने परम सुन्दर नवीन वस्त्रभूषणों से सुसज्जित करके गीतोपदेश के रूप में प्रकट किया है। यह भक्ति ही धर्म का सर्वस्व है। श्रीमद्भगवद्गीता के दार्शनिक विचारों के समर्थन रूप में ही श्रीमद्भगवत का अवतार है। ब्रज की महाभाग्यवती रससुदामयी श्री गोपाङ्गनाएं इसी भक्ति की माधुर्यमयी मूर्ति है। वे गीता की ही संगम प्रतिमा हैं। उस श्रीमद्भवद्गीता में 11वें अध्याय के अन्त में वैष्णव के अनन्य भक्त के लक्षण बतलाते हुए

मत्कर्मकृन्मत्परयमो मद्भक्त: सङ्गर्विजत:।
निवैर: सर्वभूतेषु य: स मामेति पाण्डव।।
(११/५५)

अर्जुन! जो केवल मेरा ही कर्म करता है,

बुरा लग जाए ऐसा सत्य जरूर बोलो, लेकिन सत्य लगे ऐसा झूठ कभी मत बोलो।

मेरे ही परायण है और मेरा ही भक्त है, कहीं भी जिसकी आसक्ति नहीं है एवं समस्त प्राणियों में जो निर्वैर है, वह मुझे प्राप्त होता है।

इसी गीता के बारहवें अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण ने वैष्णवों के अपने प्रिय भक्तों भक्तों के स्वरुप का वर्णन करते हुए कहा है जो प्राणीमात्र में द्वेष नहीं करता, जो सबका मित्र है, किसी को दुखी देखकर जिसका ह्रदय करुणार्द्र हो जाता है, जो ममता तथा अहंकार से रहित है, अपने दुःख सुख में समबुद्धि है, बुरा करने वाले का भी भला करता है, सदा संतुष्ट है, नित्य मुझ भगवान् से संयुक्त है, मन-इन्द्रियों का विजेता है, दृढ़निश्चयी है, मुझ भगवान् को ही जिसके मन-बुद्धि समर्पित है। जिसके किसी भी आचरण से लोग उद्विग्न नहीं होते, जो स्वयं लोगों से उद्विग्न नहीं होता, हर्ष-अमर्ष, भय उद्वेग से मुक्त है। जो किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं रखता, सदा पवित्र तन-मन है, भगवत् सेवा में चतुर है, रागद्वेषरहित उदासीन है, जिसको कोई भी सांसारिक व्यथा नहीं सताती, जो सकाम भाव से कोई आरम्भ नहीं करता। जो अनुकूल की प्राप्ति में हर्षित नहीं होता, प्रतिकूल से द्वेष नहीं करता, अनुकूल के विनाश तथा प्रतिकूल की प्राप्ति की होने पर सोच नहीं करता और अनुकूल की प्राप्ति एवं प्रतिकुल के नाश के लिए आकांक्षा नहीं करता, इस प्रकार जो शुभाशुभ का परित्यागी है, जो शत्रु-मित्र, मान-अपमान, शीत-उष्ण, सुख-दुःख में समबुद्धि है, विषयासक्ति सर्वथा रहित है, स्तुति निन्दा को समान मानता है, व्यर्थ भाषण नहीं करता, जिस किसी भी स्थिति में संतुष्ट है, घर-द्वार में ममतायुक्त नहीं है, स्थिरबुद्धि है, इस परम धर्मामृत के द्वारा जो श्रद्धापूर्वक नित्य मुख भगवान की उपासना करता है, श्रद्धायुक्त और भगवत्परायण है, वह भक्तिमान वैष्णव मुझ भगवान को अत्यन्त प्रिय है।

ये वैष्णवता के सार्वभौम स्वरुप लक्षण है। यद्यपि गेरूवां वस्त्र चतुर्थाश्रम-सर्वत्यागरूप सन्यास का प्रतीक है, वैसे ही माला तिलक आदि भी वैष्णवता के बाह्य चिह्न है तथापि केवल बाहरी वेश-भूषा से न कोई त्यागी होता है, न वैष्णव। बाहरी दिखावा तो दम्भ से या बुरी नीयत से भी हो सकता है। पुलिस की पोशाक पहनकर डाकू लोगों को लूट लेते हैं, खादी धारण करके जनता को लोग ठग लेते हैं। वैसे ही वैष्णव के तिलक माला से जनता ठगी जा सकती है। अतएव भीतर का स्वरूप ही असली स्वरूप है। इसी से उपर्युक्त श्रीमद्भागवत तथा श्रीमद्भगवद्गीता में निरुपित भक्त के स्वरूप लक्षणों में बाहरी वेश-भूषा का वर्णन नहीं है। जीवन का ब्राह्याभ्यन्तर आचार ही उसका वास्तविक स्वरूप है।

वैष्णवता के इन्हीं स्वरुप लक्षणों का वर्णन गुजरात के महान वैष्णव श्री नरसी मेहता अपने इस सरल गुजराती भाषा में भजन किया है। यह भजन महात्मा गाँधी को बहुत ही प्रिय था।

वैष्णवजन तो तेने कहिये
जे पीड़ पराई जाणे रे।
परद:खे उपकार कर तोये,
मन अभिमान न आणे रे।।
सकल लोकमाँ सहुने वंदे,
निंदा न करे कैनी रे।
वाच काछ मन निश्चळ राखे,
धन धन जननी तेनी रे।।
समदृष्टि ने तृष्णात्यागी,
परस्त्री जेने मात रे।
जिह्वा-माया ब्यापे नहिं जेने,
दृढ़ वैराग्य जेनाँ मनमाँ रे।
रामनासुँ ताली लागी,
सकल तीरथ तेना तनमाँ रे।।
वणलोभी ने कपट रहित छे,
काम क्रोध नियार्या रे।
मणे नरसैयो तेनुं दरशन करतां
कुळ एकोत्तर तार्या रे।।

वस्तुत: वैष्णव वही है जिसका जीवन सब समय, सब ओर से, सभी प्रकार से केवल भगवान की सेवा में ही लगा है। वह कर्म से विरत नहीं, परंतु उसका प्रत्येक कर्म, प्रत्येक विचार होता है - केवल भगवत्सेवा के भगवत्पूजा के लिए ही। वह सदा-

मिले हुए समय को ही अच्छा बनाए,
अगर अच्छे समय की राह देखेंगे तो पूरा जीवन कम पड़ जाएगा।

सर्वदा अपने प्रत्येक कर्म से, प्रत्येक व्यवहार से अपने प्रभु भगवान् की पूजा ही करता है। यों तो जिसकी जीभ से भगवत् के मधुर मनोहर नाम का उच्चारण होता है वह भी वैष्णव तथा परम पूजनीय है। श्री गौराङ्ग महाप्रभु कहते हैं-

प्रभु कहे यारं मुखे सुनि एक बार।
कृष्ण नाम सेई पूज्य श्रेष्ठ सबाकार।।
अतएव यारं मुखे एक कृष्ण नाम।
सेई त वैष्णव करिह ताँहार सम्मान।
कृष्ण नाम निरन्तर याँहार बदने।
से वैष्णवश्रेष्ठ मज ताँहार चरणौ।

वस्तुत: वैष्णव का वैष्णव के स्वरूप का वर्णन सहस्र नहीं है। यह तो वैष्णव हृदय के अनुभव की वस्तु है। अतएव इसका वर्णन रुकने जाना अपनी अज्ञानता को ही प्रकट करना है। मुझ सरीखा-अभिमान से भरा सामान्य प्राणी पवित्रम् वैष्णव धर्म का क्या बखान करें। महाप्रभु श्री चैतन्यदेव ने कहा है-

तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीय सदा हरि:।

जो अपने को तृण से भी अधिक नीचा मानते हैं, जो वृक्ष के समान सहनशील हैं, (पत्थर मारने वाले को सुस्वादु रसपूर्ण फल देते हैं, काटने-चीरने वाले-जलाने वालों का भी भाँति-भाँति से उपकार करते हैं।) जो अमानी होकर सबको मान देने वाले हैं, उन्हीं के द्वारा हरि सदा कीर्तनीय हैं। ये ही सच्चे वैष्णव के लक्षण हैं।

आज सभी विषय कामना की आग से जल रहे है। सारा जगत् वस्तुत: आज इस प्रेममय वैष्णव धर्म की प्रेमसुधा-धारा के अभाव से ही संत्रस्त है। जिस विश्व प्रेम में एक दिन, शान्तिपुर डुबडुब नदे भेसे जाय। इस प्रेम का प्लावन बंगाल के नवद्वीप में आरम्भ हुआ था। प्रेम के ठाकुर श्रीगौराङ्ग के श्री चरणों में हम सभी प्रार्थना करें कि आज का जलता हुआ जगत् एक बार फिर उसी पवित्र त्यागरूप प्रेम की सुधा-धारा से आप्लावित हो। हम सभी श्री चैतन्य महाप्रभु के आदर्श के अनुसार प्रेम की सुधा-धारा से आप्लावित होकर परम शान्ति तथा परम सुख का अनुभव करें।

स्वत्यस्तु विश्वस्य खल: प्रसीदतां
ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो घिया।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षज
भावेश्यतां नो मतरप्यहैतुकी।।

समस्त विश्व का कल्याण हो, दुष्ट प्रकृति के लोग क्रूरता का त्याग करें। सब जीव परस्पर मङ्गलचिन्तन करें। हमारी बुद्धिथ अधोक्षज श्री भगवान में अहैतुकी प्रीति के साथ भलीभाँति लगी रहे।

बोलो वैष्णवजन तथा उनके प्रभु प्रेमधाम प्रभु की जय जय!

●●●●●

रामानन्द सम्प्रदाय के केन्द्र

अयोध्या, अलवर, अहमदाबाद, आबू, इटावा, इलाहबाद, उज्जैन, करनाल, करौली, काशी, गांगरौन, ग्वालियर, चित्रकूट, छपरा, जयपुर, जैसलमेर, जोधपुर, पटियाला, बाराबंकी, मथुरा, मिथिला, मिर्जापुर, मेवाड़, सागर, हरिद्वार।

जब तक डरते रहोगे, तब तक जिंदगी के फैसले लोग ही लेते रहेंगे।

आलेख

◆◆◆
चेतन स्वामी

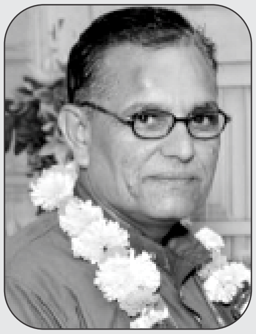

धनावंश के संकल्प

इस आलेख का शीर्षक विचार में डाल सकता है। विचार में इसलिए क्योंकि संकल्प किसी एक जाति, धर्म, सम्प्रदाय या व्यक्ति विशेष भर से नाता रखनेवाली संज्ञा नहीं है। न केवल मनुष्य बल्कि संसार के प्रत्येक जीव को कार्य प्रणत करने में संकल्प शक्ति ही काम करती है। बिना संकल्प के तो उठने-बैठने जैसी सामान्य क्रिया भी संभव नहीं है। भोजन करने के लिए भी भीतर से एक स्फूरणा जागृत होती है, तभी किया जा सकता है। हर किसी को हर कार्य की प्रेरणा देनेवाली संकल्प शक्ति को हम अपार बलशाली मान सकते हैं। संकल्प जितना बड़ा होगा, कार्य भी उसी आकार-प्रकार का संभव है। यह अनंतकोटि ब्रह्माण्ड भी परमात्मा की उस संकल्प शक्ति का ही परिणाम है। जब हम संसार (सृष्टि) के विस्तार और विकास को समझने का प्रयत्न करते हैं, तो उसमें भी वही संकल्प की ताकत नजर आती है। चाहे पौराणिक आख्यानों के दुष्कर कार्य हों अथवा अधुनातन वैज्ञानिक आविष्कार हों, सर्वत्र संकल्प ही कार्य परिणत होता नजर आता है। ऐसी संकल्प शक्ति को एक समाज विशेष से जोड़कर देखने के पीछे क्या मंतव्य हो सकता है, आओ इसे समझने का यत्न करें।

भक्त धनाजी महाराज को कौन नहीं जानता? वे भक्तों में एक विभूति के रूप में सुपूजनीय है। धनावंशी स्वामियों का यह सौभाग्य है कि भगवान के अनन्य भक्त धनाजी महाराज ने धनावंश की स्थापना की। धनावंश उनके शुभ संकल्प का परिणाम है। अगर भक्त प्रवर एक धार्मिक सम्प्रदाय धनावंश के स्थापना की संकल्पना नहीं करते तो आज भगवद्निष्ठ यह पंथ होता ही नहीं। इस प्रकार हम संत शिरोमणि धनाजी महाराज के ऋणी एवं कृतज्ञ हैं, बारंबार उनके श्रीचरणों में प्रणाम निवेदित

शास्त्रों में उल्लेख है कि व्यक्ति जैसा संकल्प करता है, उसी के अनुरूप कार्य करने लगता है। यत्क्रतुर्भवति तत्कर्म कुरुते, यत्कर्म कुरुते तदनिष्पद्यते। जैसा सोचेगा, वैसा करेगा और फिर वैसा ही हो जायेगा। यानि आपका संकल्प ही अच्छे बुरे व्यक्ति के रूप में आपकी संरचना करता है। बार-बार एक ही बात के अनुचिंतन से संकल्प दृढ़ बनते हैं।

रिश्ते बरकरार रखने का एक ही तरीक़ा है, अपनों में कमियां नहीं अच्छाइयां देखें।

करते हैं और सर्वत्र व्याप्त उनके सूक्ष्मांश से यह वांछा रखते हैं कि उनके अनुग्रह से इस पंथ की सदैव आध्यात्मिक उन्नति वर्धमान रहे।

आओ, हम धनावंशी कतिपय शुभ संकल्प करें और संकल्प की पगडंडी पर चलकर समाज को नव अभ्युदय प्रदान करें।

हम भली प्रकार जानते हैं कि उच्छृंखल समाज हमेशा पतन को प्राप्त होता है, भले ही वह कितनी ही आर्थिक उन्नति या भौतिक उपादानों की प्राप्ति अधिक से अधिक क्यों न करेले। वास्तविक उन्नति अभौतिक उन्नति ही कहलाती है। इसलिए पतन की ओर ले जाने वाले मलीन विचारों तथा लोभ, लालच, हिंसा, कामाचार, पापाचार, अत्याचार की ओर से प्रवृत्त करने वाले संकल्पों से टलें। उन्हें अपने भीतर स्थान न देवें। शास्त्रों में उल्लेख है कि व्यक्ति जैसा संकल्प करता है, उसी के अनुरूप कार्य करने लगता है। यत्क्रतुर्भवति तत्कर्म कुरुते, यत्कर्म कुरुते तदनिष्पद्यते। जैसा सोचेगा, वैसा करेगा और फिर वैसा ही हो जायेगा। यानि आपका संकल्प ही अच्छे बुरे व्यक्ति के रूप में आपकी संरचना करता है। बार-बार एक ही बात के अनुचिंतन से संकल्प दृढ़ बनते हैं। दृढ़ संकल्प कार्य रूप में परिणत होने लगते हैं। बार-बार का चिंतन आपको महा पातकी बना सकता है तो सकारात्मक चिंतन साधु भी बना सकता है। आज जीवन में हम देखते हैं कितने लोग दुर्व्यसनों के शिकार होकर अनेक प्रकार के अपराधों की ओर उन्मुख हो जाते हैं। इसलिए पहला संकल्प हुआ, समाज के लिए उत्थान परक सकारात्मक कार्य करने का। भीतर से यह आवाज बहुत बुलंदी से उठनी चाहिए कि मैं अपने समाज के लिए अपने तन-मन-धन से किस प्रकार का योगदान दे सकता हूँ। ऐसा कुछ यथेष्ट करूं, जिससे समाज को लाभ प्राप्त हो। समाज के प्रति कर्तव्य बोध का यह संकल्प, समाज की जीवन औषधि बनता है। समाज के लिए तटस्थ सोच रखनेवाले, अवहेलना बरतनेवाले लोग बड़े नुकसानदायक होते हैं। उनकी कुंठित सोच से समाज टूटता है। तटस्थ लोग, हमेशा यह भाव रखते हैं-हमारा क्या लेता है, हम क्या करें, या फलां चीज में हम क्यूं योगदान करें? इस तरह का एकाकी भाव समाज के एकत्व को तोड़ता है।

प्रत्येक धनावंशी प्राथमिक एवं अनिवार्य सोच के रूप में अपने भीतर यह बात बिठाए कि धनावंश एक सम्प्रदाय विशेष को धारण करनेवाला प्रभु प्रणत वैष्णव पंथ है। वैष्णव है, इसलिए वह सबका श्रद्धेय है। किसी व्यक्ति के प्रति लोगों की श्रद्धा कब उपजती है? श्रेष्ठ व्यक्ति के प्रति ही श्रद्धा उपजती है। इसे सात्विक श्रद्धा कहते हैं। जिसका अंत:करण शुद्ध है, जिसके वचन और आचरण शुद्ध हैं, उसी के प्रति ही श्रद्धा का भाव जन्म लेता है। सात्विक वातावरण से सुंदर व्यक्तित्व का निर्माण होता है। हम अपने पौराणिक शास्त्रों में देखते हैं बालकों के चरित्र निर्माण के लिए बड़े प्रयास किये जाते थे। गुरुकुल में अध्ययन करने के लिए इसलिए भेजा जाता, ताकि गुरु सान्निध्य में रहकर वह एक निर्मल चरित्र व्यक्ति बने। संस्कार सम्पन्न बालक अच्छे संग से कितने ही उच्च पदों को जीवन में धारित कर सकता है। उत्तम संकल्प का सहारा लेकर हर वांछित वस्तु और स्थिति को प्राप्त किया जा सकता है। उपरोक्त बातों का सार यह हो सकता है एक धनावंशी को उत्तम आध्यात्मिक ज्ञान तथा भगवदोन्मुख शुद्ध आचरण को अपनाकर श्रेष्ठ वैष्णव कहलाना चाहिए। और यह सब सात्विक संकल्प के बल पर पूर्णतया संभव है।

सभी संकल्पों में नैरंतर्य आवश्यक है। निरंतर एक ही संकल्प रखने से वह वांछित फलरूप उपस्थित हो जाता है। धनाजी महाराज इस बात के उदाहरण है। उन्होंने साक्षात्कार, साकार रूप में अपने दृढ़ संकल्प के बल पर ही किया। अधिकांश देखा जाता है कि संकल्प कर्त्ता अपने ही संकल्प के प्रति अविश्वास करने लगता है। अविश्वास, संकल्प सिद्धि में बाधक होता ही है। अगर कोई भगवद् पूजा करने वाला मूर्ति में धातु देखे तो परमात्मा के प्राप्ति संभव नहीं। और जो सच्चा भगवद् विग्रह माने तो ठाकुरजी को प्रकट होना ही पड़ता है। ऐसे बहुत से भक्तों, भगवद् निष्ठों के उहादरण हैं-अपने संकल्प से परमात्मा से लेकर भौतिक वस्तुओं को उपस्थित कर दिया।

तो धनावंशी बंधुओं, प्रथम धारण करने योग्य बात-हमारे संकल्प सुविचारित हों, हमें उनके गुणावगुण का ज्ञान भली प्रकार हो। हम जिन संकल्पों को अपने मन में ला रहे हैं, और बार-बार के चिंतन से उन्हें पुष्ट करने का उद्योग प्रारम्भ कर दिया है तो यह ध्यान रहे, हमारे चिंतन से एक वृहत्तर जन समूह अर्थात् समाज को लाभ हो। वैयक्तिक लाभ के लिए किया जानेवाला संकल्प तुच्छ कोटि का होता है।

संकल्प के लिए विचार करने वाली दूजी बात

धैर्य और परिश्रम से हम वो प्राप्त कर सकते हैं, जो शक्ति और शीघ्रता से कभी नहीं कर सकते।

यह है कि हम संकल्प का प्रारम्भ न भूलें, अर्थात् हमें यह याद रहना चाहिए कि हमने कौनसा संकल्प कर रखा है। एक संकल्प को पूरा होने से पहले दूसरे संकल्प नहीं करने चाहिए। यानि संकल्पों की झड़ी नहीं लगानी चाहिए।

संतों का कहना है कि अति सूक्ष्म संकल्प ही फलीभूत होकर स्थूल जगत का रूप धारण कर लेते हैं। एक उदाहरण देकर समझाया गया है कि जैसे सूर्य की किरणें जल का आकर्षण करती हैं, यह बहुत ही सूक्ष्म क्रिया होती है, किंतु वहीं-जल बर्फ के रूप में ठोस आकार-प्रकार में देखा जा सकता है। योग वशिष्ट में प्रसंग आता है कि सिद्धों ने एक पांच फीट की शिला में ब्रह्माण्ड के दर्शन करा दिए थे। सभी चौदह लोक, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, सागर, पृथ्वी, वन, नदियां अर्थात् सांसारिक पदार्थ। सब कुछ संकल्प से उपस्थित कर दिया। वैसे भी यह समस्त संसार और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड चिद् शक्ति के संकल्प बल से ही प्रसूत है। महाभारत में भी ऐसा ही उल्लेख है। क्षणांश में श्रीकृष्ण अर्जुन को एक दूसरे लोक के जीवन का दिग्दर्शन करा दिया। संकल्प की बड़ी महत्ता है। संकल्प जितना बड़ा, उसके परिणाम भी उतने ही बड़े। कुछ साधक ऐसे होते हैं, वे तो यह सावधानी रखते हैं कि उनके भीतर किसी भी प्रकार के संकल्प नहीं उठे। मुक्ति के संकल्प से भी दूर रहते हैं। जो होगा, देखा जाएगा। पर साधना और भक्ति के भी भिन्न-भिन्न मार्ग है।

संतों ने संकल्प को परिणाम देने वाले कल्पतरु, कामधेनू तथा चिंतामणि जैसे नामों से अभिहित किया है। एक कथा आती है कि एक परिश्रमी व्यक्ति बड़े परिश्रम से अपने खेत की पशुओं से सुरक्षा की खातिर मेड़ पर खाई दे रहा था। अधिक परिश्रम से जब थक गया तो गांव की ओर रवाना हुआ। रास्ते में थोड़ी दूर चलने पर एक उसे एक सुंदर घेर-घुमेर वृक्ष दिखाई दिया तो सुस्ताने का मन हुआ। वह उस पेड़ के नीचे पसीना सुखाने लगा। पेड़ की छाया ने पसीना सुखा दिया, सोचा परिश्रम से थक गया हूं, प्यास भी लगी है, अगर पानी मिलता तो पी लेता। उसके संकल्प करने भर की देर थी, उसे बगल में शीतल जल से भरी झारी दिखाई दी। पानी का एक घूंट भरते ही मन में दूसरा संकल्प उठा कि-बड़ी भूख लगी है, कुछ अच्छा भोजन खाने को मिल जाता तो कैसा रहता। आश्चर्य विभिन्न व्यंजनों से भरा थाल उसके सामने उपस्थित हो गया। स्वादिष्ट भोजन कर उसे परम संतुष्टि मिली, पर इस मन का क्या किया जाए। सोचा-कितना परिश्रम किया है, पेड़ की ठंडी छांव तले पलंग हो तो सोकर थकान उतार लूं। सोचने भर की देर थी, नरम गद्दा लगा पलंग उपस्थित हो गया। पलंग पर सोते ही दूसरा संकल्प जगा कि घोर परिश्रम से हाथ-पअर दुख रहे हैं, कोई इन्हें दबानेवाली होती बड़ा आराम रहता। एक सुंदर स्त्री संकल्प के साथ हाथ-पैर दबाने लगी। उसे सुख तो मिला, पर संकल्पों की लड़ी कब टूटती है? सोचने लगा-यह पराई स्त्री मेरे हाथ-पैर दबा रही है-काम तो उचित नहीं है, कोई लठ मारने लगे तो? एक क्षण में उसके लठ पड़ने लगे, वह कामनाओं के उस कल्पवृक्ष के नीचे से भागा। अपनी चोटों को सहलाते और अधिक दुखी हो गया। संकल्प पीछा नहीं छोड़ते। अशुद्ध संकल्प मुसीबत बन जाते हैं। निम्न कोटि के संकल्प कहीं का नहीं छोड़ते।

संकल्प, अनुचिंतन में छुपे रहते हैं। सदैव एक सजग दृष्टि रहनी चाहिए कि मेरे संकल्प मुझे कहा लिए जा रहे हैं। संकल्पों का भटकाव ही आपका भटकाव है। क्यों शास्त्रों में यह कहा जाता है कि खराब चिंतन न करें, क्योंकि खराब चिंतन की परिणति बहुत खराब होती है। जो अच्छा चिंतन करते हैं उनका पतन नहीं होता। गुरु सदैव शिष्य को सद् राह दिखाते हैं और सद्मार्ग में रखते हैं। धनावंश गुरु प्रणीत मार्ग है। प्रात: स्मरणीय गुरुदेव धनाजी महाराज ने हमें जो भक्ति पंथ बताया है, निरंतर हमें उसी का पथ चलन करते रहना चाहिए।

धनाजी महाराज ने बताया था कि ईश्वर की आराधना से स्वयं व्यक्ति में परमात्मा का ऐश्वर्य प्रकट होता है। अन्यथा यह ऐश्वर्य छुपा रहता है। इस बात को हरेक साधक समझले तो उसको राम रूप होते विलम्ब नहीं लगता। आप जानते हैं, धनाजी महाराज की जैसी सोच थी, वैसा ही उनका वचन था और जैसा वचन था, उसी अनुरूप सिद्धि थी। साधुजन जैसा संकल्प करते हैं, वैसा ही हो जाता है।

ध्यान रहे, नन्हें बालक और स्त्रियों के मन अधिक कोमल होते हैं, उनके अंत:करण में आध्यात्मिक संकल्प जगानेवाली बातों को भरना चाहिए। शुभ संकल्प, शुभ विचार, शुद्ध भावनाएं एक सुंदर, पवित्र और निर्मल व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। अच्छे विचारों की प्राप्ति, सद् उपदेशों, सत्संग तथा सद्शास्त्रों से संभव है। इनका सेवन करते रहें। ◆◆◆

थोड़ा सा घमंड उन लोगों के लिए रखिए, जो आपकी नम्रता को नौटंकी समझते हैं।

आलेख

गारबदेसर : बैराग मण्डल और महन्त

गांव गारवदेशर के सुप्रसिद्ध महंत–साधुओं की गद्दी बड़ी पुरानी एवं सम्मानीय है। यह धन्नावंशी वैरागियों के विस्तृत क्षेत्र में पूजनीक हैं। गद्दी के महंत धन्नावंशी वैरागियों में तो शिरोमणि हैं ही, पर इनकी गणना पहुँचे हुए पारंगत साधुओं में भी होती रही है। इस गद्दी की स्थापना का पता बहुत पुराना है।

स्वामी श्री रामानुजाचार्य जी (सं 1073–1194) के श्री सम्प्रदाय में ये शिरोमणि संत होते हुए विष्णु या नारायण की उपासना करते हैं। इसमें अनेक शाखाएँ और अच्छे–अच्छे साधु हुए हैं, जिनकी शिष्य परम्परा, भक्ति के सम्यक्य प्रसार हेतु देश में बराबर फैलती हुई जनता को भक्ति मार्ग की ओर आकर्षित करती रही है। विकम की 14वीं शताब्दी के अन्त में काशी के आचार्य श्री राघवानन्द जी इस सम्प्रदाय के प्रधान थे, जिनकी गद्दी के शिष्य भारत के प्रसिद्ध पर्यटक श्री रामानंद जी हुए। वे उपासना के क्षेत्र में किसी प्रकार का लोकिक प्रतिबन्ध (भेदभाव) नहीं मानते थे। उन्होंने विष्णु के अनेक अन्य रूपों में से केवल राम–रूप'' को ही लोक के लिए अधिक कल्याणकारी मानकर (सं0 1575–80 में) एक सबल सम्प्रदाय का संगठन किया था। उसे रामावत सम्प्रदाय कहते हैं। यह गारबदेशर के महंतों की गद्दी धनावंशी है। मगर 18वीं शताब्दी में गाँव गारबदेशर में इसका समृद्धावस्था में उल्लेख मिलता हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में स्वामी मानदास के शिष्य हरिदास का बीकानेर राज्य तक सम्मान था। तत्कालीन महंत ने जन–हितार्थ दो कुए और एक तालाब बनवाकर गांव को दिए थे और इनकी जमीन में ही गारबदेशर का आथूना (पश्चिमी) बास है। कुओ करमाणों और नैडक़ी तलाई भी इन्हीं की जमीन में हैं। उसमें चारों

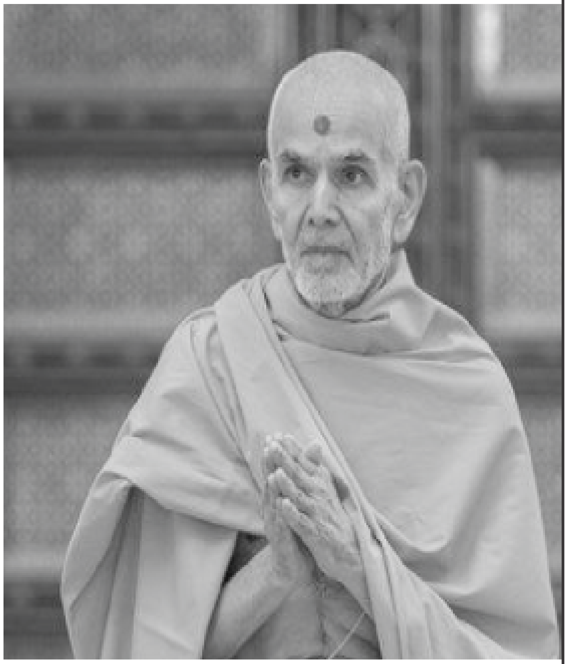

बुर्जो वाला भगवान का बड़ा मन्दिर और रहने के लिए आज भी अनेक स्थान (भगनावस्था में) दिखाई देते हैं। महंत की जमीन में बसने वाले गुवाड़े (घर, राजपूतों और ब्राह्मणों के) महाराज सूरत सिंह जी के ताम्र पत्र (स01852) के अनुसार जकात, मापो, मुकातो गांव मुजब देते थे। यहां महंत की जमीन बीघा तीन सौ; नौ सौ और सात सो पचास–कुल 2025 बीघा थी, जो अब तक उन्हीं के मंदिर पीछे, शिष्य भोगते हैं। स्वामी हरिदास के देहावसान के स्थान पर एक मकान है और चरण पादुकाएँ। महंत हरिदास वैरागियों में दादा नाम से पुकारे जाते थे। बालकों का झड़ूला उनके उसी भवन में उतरता है और विवाह–शादी के समय लोग दर्शनार्थ जाते हैं। श्री हरिदास महंत तकड़बंध एवं राजवी की भाँति

परोपकार बहुत ही विश्वसनीय कार्य है,
जिसका ईश्वर के अतिरिक्त कोई साक्षी नहीं होता।

जमीन–जायदाद वाले थे। बीकानेर के महाराजा उनसे मदद लिया करते थे।

एक बार गांव कालू के गोदारा जाटों ने मेला (धार्मिक आयोजन) किया था। इसलिए गारबदेशर के महंत से एक बड़ा तिरपाल माँगकर लाये। दुर्भाग्य से वह तिरपाल कालू में ही जल गया। तब जाट लोग भयभीत हुए। महंत के पास तिरपाल की बात बताने गये और क्षमा–याचना मांगी, महंत ने माफ कर दिया। किन्तु कालू के जाटों ने तिरपाल के एवज में जमीन बीघा सात सौ पचास (खेत–5 की) महंत को अर्पित कर दी, जिसका तामापत्र (सं0 1852) में पूरा उल्लेख है।

महंत हरिदास का शिष्य अमरदास और अमरदास के शिष्य बद्रीदास हुए। बद्रीदास को भी जमीन बाबत लगान आदि का ताम्रपत्र बीकानेर महाराजा रतनसिंह तथा सरदारसिंह ने मोहता लीलाधर से लिखवाकर (सं0 1900 में) दिया था। बद्रीदास के शिष्य सेवादास ने (वि0 सं0 1974 में) गांव कालू आकर अपना बास बसाया था और मंदिर तथा कुए की स्थापना की थी।' सेवादास के शिष्य मेघदास और मालूराम हुए। मालूराम तो छोटी अवस्था में ही चले गये। लेकिन मेघदास जी ने अपने ठाकुर द्वारे की अच्छी व्यवस्था बनाये रखी। अपने गुरू की भाँति समाज की मर्यादा हेतु दूर–दूर के गांवों तक सेवकों के विशेष आयोजन अवसरों पर जाकर सम्मिलित होते और गुरूमंत्र देकर दक्षिणा प्राप्त करते थे। ये वहाँ रात्रि जागरण भी करवाया करते और नाड़ी देखकर दवा–दारू भी दिया करते थे। इनके साथ अपने बहुत से आदमी भी जाया करते थे। इनके आगे राजा–महाराजाओं की भाँति कई व्यक्ति तुर्री बजाते हुए चलते थे। ये वहाँ जाकर उतरते तब उस घर का मुख्य आयोजन आरम्भ होता था। उस घर में इन्हीं के द्वारा सारा लेन–देन और शिक्षा–उपदेश हुआ करता था। ऐसी ही सामाजिक प्रथा–परम्परा प्रचलित थीं, जो आज के युग में सिसकती–श्वास भर रही है।

गारबदेशर के महंत जब कालू आकर बसे, तब वहाँ से वैरागियों के करीब बीस घर इनके साथ आकर बसे थे। इन्होंने ठिकाने से कई शर्तो की स्वीकृति ले ली थी। जैसे, कालू मे इनके अपने मंदिर के आगे डफ, डांडिया (घीदड़) नृत्य और रास–रभत के खेल बीसों वर्ष तक होते रहे।

मेघदास जी के शिष्य श्री विष्णुदास महन्त अच्छी सेवा–पूजा के अलावा रामायण पाठी एवं आदर्श भजनीक हुए। वेसे तो महन्त श्री सेवादास जी ने कालू में आकर अपना कूआ, मंदिर आदि बनवा लिये थे। किन्तु वे गारबदेशर से आधाचार रखते हुए कालू रहा करते। खेती, पशुओं और लेन–देन की आय से जितना अधिक जोड़तें (संचय करते), उतना ही द्रव्य, दान–धर्म के कार्यो में व्यय कर दिया करते थे। इसके बाद मेघदास जी कालू के मंदिर में ही रहे और श्वांस छोडने पर ही भक्तों ने इनके पार्थिव शरीर को गारबदेशर ले जाकर दाह–संस्कार किया था। इस गद्दी के महंत श्री विष्णुदास अब नहीं रहे। आपने अपने कूए की जमीन और खेली, कोठों के पत्थर–चोकों से बालिका विद्यालय भवन कालू बनवाने में (सन् 1975 में) अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया है। इन्होने अपने मंदिर के कड़ाह–टोकणा, परात–थालियां आदि बर्तन बिरादरी पंचायत को दे दिये हैं। क्योंकि ये एक जगह नहीं रहते और रमते–राम की तरह दूर–दूर की यात्रा कर आया करते थे। तब बिरादरी के विवाहादि के कार्यो में सुविधाएँ बनी रहती है। मंदिर की साविधि–विधान पूजना होती है और गाँव के लोग ठाकुर जी के दर्शनों से पूर्ण लाभान्वित होते रहते हैं।

●●⬤●●

सत्य केवल उनके लिए कड़वा होता है, जो झूठ में रहने के आदी हो चुके होते हैं।

धनावंश के कुछ कार्य प्राथमिकता से हो

धनावंशी महासभा शीघ्र बनाई जाए तथा उसे ऐसे स्थान पर बनाया जाए, जहां हरियाणा, पंजाब के लोग भी आसानी से पहुंचकर भाग ले सकें। इस संस्था को बनाने में अब विलम्ब नहीं करना चाहिए। अब विलम्ब उचित नहीं है। सभी समाज अपनी महासभाओं को बनाए हुए हैं तो धनावंशी किस कारण से पीछे रहें।

अरविंद सुंडा
(धनावंशी)

धनावंश के बहुत सारे कार्य अभी प्रारम्भिक स्तर पर शुरु करने की आवश्यकता है। सभी जानते हैं कि धनावंशी स्वामी उत्तरी पश्चिमी राजस्थान, पंजाब तथा हरियाणा आदि क्षेत्रों में बसते हैं। धनावंशी स्वामी महासभा तथा कोई श्रद्धा केन्द्र स्थापित न होने से सारे धनावंशी कहीं भी एक जगह एकत्रित नहीं हो पाते है जिसके कारण समाज में पारस्परिक स्नेह विकसित नहीं हो पाता। फलस्वरूप दूरियां और अपरिचय बना रहता है। कैसी विचित्र बात है, अब तक सारे धनावंशियों को अपने सारे गोत्र (जातीय नख) ही मालूम नहीं है और न ही तीनों राज्यों में बसने वाले धनावंशियों को अभी तक यह पता है कि वे किन-किन गांवों में निवास करते हैं तथा उनकी कुल संख्या कितनी है। इस तरह के गणात्मक काम महासभा के होते हैं। मेरा सुझाव है कि धनावंशी महासभा शीघ्र बनाई जाए तथा उसे ऐसे स्थान पर बनाया जाए, जहां हरियाणा, पंजाब के लोग भी आसानी से पहुंचकर भाग ले सकें। इस संस्था को बनाने में अब विलम्ब नहीं करना चाहिए। अब विलम्ब उचित नहीं है। सभी समाज अपनी महासभाओं को बनाए हुए हैं तो धनावंशी किस कारण से पीछे रहें।

धनावंशी स्वामी समाज में तत्काल किए जाने वाले कार्यों में दूसरा प्रमुख कार्य यह है कि अलग-अलग क्षेत्रों में धनावंशी स्वामियों को अलग-अलग रुप से पुकारा जाता है, जैसे बैरागी, साध, वैष्णव। इन सबसे भ्रांति होती है तथा जाति सम्बोधन में एकरुपता भी नहीं रहती है, इसलिए सभी धनावंशियों को धनावंशी लिखना चाहिए। जहां अन्य कहीं जगह भी जाति लिखने की आवश्यकता पड़े तो सभी जगह धनावंशी शब्द प्रयुक्त करें। इससे हमारी पहचान बढ़ेगी।

धनावंशी स्वामी समाज की केन्द्रीय संस्था की न केवल स्थापना की जाए बल्कि वहां वर्ष में दो बार बड़े आयोजन किए तथा समाज में श्रेष्ठ कार्य करने वाले महानुभावों तथा प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया जाए। इससे आने वाली पीढ़ी भी समाज से जुड़ाव रखेगी। आयोजनों में जब हम बड़ी संस्था में एकत्रित होंगे तो हमें विवाह योग्य संतान के रिश्ते करने में भी सुगमता होगी। अभी थधनावंशी स्वामियों में वैवाहिक सम्बन्धों के लिए अनेक विसंगतियों का सामना करना पड़ रहा है।

धनावंशी स्वामियों में रिश्तों के लिए एक साइट तैयार की जाए, जिस पर विवाह योग्य युवक-युवतियों का पूरा बायोडेटा मौजूद रहे। जब ऐसा सब समाजों में हो रहा है तो धनावंश इस क्षेत्र में पिछड़ा हुआ क्यों रहे।

धनावंशी महासभा से प्रत्येक धनावंशी अनिवार्य रुप से जुड़ जाए यह प्रयास तो प्राथमिक रूप से जरुरी है। अगर महासभा के लिए कहीं व्यवस्थित जगह नहीं मिल रही है तो एक बार अस्थाई रूप से ही कहीं काम प्रारम्भ दिया जाए। संगठन खड़ा हो जाएगा तो जगह प्राप्त करने में भी आसानी रहेगी। इस आधुनिक युग में समाज का अलग-थलग रहना ठीक नहीं है।

अपनी ज़िंदगी की उत्तर पुस्तिका को ख़ुद जांचिए, लोग अपने हिसाब से जांचेंगे तो फेल ही करेंगे।

श्री धनावंश हित में विज्ञापन सहयोग करने वाले धनावंशी बंधु

1. श्री रामचंद्र स्वामी, स्वामियों की ढाणी
2. श्री रघुवीर आनन्द स्वामी, अहमदाबाद
3. श्री सुखदेव स्वामी, अहमदाबाद
4. श्री लक्ष्मणप्रसाद स्वामी, पलसाना
5. श्री पदमदास स्वामी, बीदासर
6. श्री गोपालदास स्वामी, पालास
7. श्री गोविन्द स्वामी, हैदराबाद
8. श्री श्रवणकुमार बुगालिया, दिल्ली
9. श्री भागीरथ बुगालिया, दिल्ली
10. श्री गोपालदास महावीर स्वामी, थावरिया
11. श्री बृजदास स्वामी पुत्र श्री सीतारामदास परिव्राजक, सूरत
12. श्री ओमप्रकाश स्वामी, पाली
13. डॉ. घनश्यामदास, नोखा
14. श्री मनोहर स्वामी, अजीतगढ़
15. श्री गुलाबदास स्वामी, जोधपुर
16. श्री बनवारी स्वामी, स्वामियों की ढाणी
17. श्री त्रिलोक वैष्णव, जोधपुर

उपरोक्त सभी धनावंशी बंधुओं का आभार। अन्य जनों से भी निवेदन है कि इस पत्रिका के सुचारु प्रकाशन हेतु अपना विज्ञापन सहयोग प्रदान कर कृतार्थ करें।–प्रकाशक

पत्रिका के विशिष्ट सहयोगी

सांवरमल स्वामी, आबसर
अर्जुनदास स्वामी, हरियासर
देवदत्त स्वामी, सूरत
लालचन्द स्वामी, धोलिया
बजरंगलाल स्वामी, लालगढ़
प्रेमदास स्वामी, खिंयाला

श्री धनावंशी हित

यह पत्रिका धनावंशी समाज की एकमात्र पत्रिका है। कृपया इसके प्रचार–प्रसार में अपना योगदान प्रदान करें।

- पत्रिका में विज्ञापन, बधाई संदेश, सूचना, समाचार तथा रचनाएं भिजवाकर अनुगृहीत करें।
- यह अंक आपको कैसा लगा? अपनी राय से अवगत करवायें।
- पत्रिका का सालाना शुल्क 200/– रुपये है। कृपया सदस्य बने।
- **पता–श्री धनावंशी हित, धनावंशी प्रकाशन, कालू बास, श्रीडूंगरगढ़–331803 (बीकानेर) * मो.: 9461037562**

राजेन्द्र स्वामी का निधन

नवंबर माह में श्री डूंगरगढ़ के बिग्गा बास निवासी श्री राजेंद्र प्रसाद स्वामी पुत्र श्री बुद्धर दास स्वामी का असामयिक निधन हो गया था। वे एक प्रतिभाशाली युवक थे। ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करें। राजेंद्र स्वामी का जाना बेहद दुखद रहा। वे पेशे से अध्यापक थे। श्रीधनावंशी हित पत्रिका परिवार उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

वर्तमान में धनावंश के जितने भी महंत द्वारे हैं। उन द्वारों पर भले ही नाम का ही सही पर पारंपरिक महंत परिवार का कोई न कोई सदस्य महंत रूप से गद्दी पर बैठा अवश्य है। हमें उस गद्दी पर कोई नया महंत बाहर से लाकर नहीं बैठाना है। और ना ही किसी प्रकार का विवाद उपस्थित करना है। करना केवल इतना सा है कि जो व्यक्ति महंत की गद्दी को संभाले हुए हैं अर्थात महंत रूप में विराजित हैं, हमें बार–बार इस प्रकार के सभी महंतों को इकट्ठा कर उन्हें कुछ ओरियंटेशन जैसा यानी अभिमुखीकरण से जोड़ना है। यानी एक महंत के लिए जो प्राथमिक ज्ञान होना चाहिए हमें उन्हें उस ओर प्रवृत्त करना है। इस कार्य में, इस दक्षता में विद्वत जनों का सहयोग लिया जाएगा और उनका एक संक्षिप्त सा पाठ्यक्रम रहेगा। इस विधि से वह महंत जन आवश्यक विद्वता की कोटि में आ जाएंगे और बाद में उनका अध्ययन का स्वभाव बन जाने पर स्वाध्याय से विद्वत कोटि के महंत बन सकते हैं। इस प्रकार इस परंपरा को पुनर्जीवन दिया जा सकता है। आपने देखा होगा साधु साध्वियों को भी पढ़ाने का चलन रहा है। तो यही प्रयोग हम अपने महंतद्वारों पर क्यों न करें। आप सभी समाज के प्रबुद्ध जन हैं। मेरी उपरोक्त बातों में परिवर्तन परिवर्धन भी कर सकते हैं। नए सुझाव भी दे सकते हैं।

सदस्यता शुल्क एवं अन्य भुगतान निम्न खाते में करें।

Dhanavanshi Prakashan
A/c No. - 38917623537
Bank - State Bank of India
Branch - Sridungargarh
IFSC code - SBIN0031141

ये व्यक्तित्व की गरिमा ही है,कि फूल कुछ नही कहते,
वरना कभी, कांटों को मसलकर देखो ।

।।श्री धनावंशी स्वामी समाज के प्रति हार्दिक शुभकामनाएं।।

रामचन्द्र स्वामी
स्वामियों की ढाणी, बीदासर

Mobile : 9811685994
9873345994

Gateway Apparels

All Kinds of Gents Pant and Trouser

I-21, Sector, A-1,
Tronica City Industrial
Area,Ghaziabad- 201102

With best compliments from :

रामचन्द्र स्वामी

स्यामियों की ढाणी, बींदासर

Mobile : 9811685994
9873345994

LIFE TIME FASHION

Mfrs. & Suppliers of : **Jeans & Cotton Pant**

IX/6398, Mukherjee Gali No 2, Gandhi Nagar,
Delhi-110031 Phone : 011-22075994

If Undelivered Return To
सम्पादक : श्री धनावंशी हित
धनावंशी प्रकाशन
कालू बास, पोस्ट : श्रीडूंगरगढ़-331803
जिला-बीकानेर (राज.) मो.: 9461037562

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, सम्पादक चेतन स्वामी द्वारा धनावंशी प्रकाशन, कालू बास, श्रीडूंगरगढ़ द्वारा प्रकाशित एवं महर्षि प्रिण्टर्स, श्रीडूंगरगढ़ द्वारा मुद्रित ।